पशुधन ज्ञान

वर्ष : 4 | अंक : 02 | जुलाई, 2018 | अर्धवार्षिक, हिसार | शुल्क : ₹30/-

प्रकाशक
विस्तार शिक्षा निदेशालय
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय
हिसार – 125004 (हरियाणा)

प्रकाशक:

डॉ. आर.एस.श्योकन्द

निदेशक, विस्तार शिक्षा निदेशालय

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय

हिसार–125004 (हरियाणा)

सम्पादक:

डॉ. देवेन्द्र सिंह

सम्पादकीय मण्डल:

डॉ. वन्दना भनोट

डॉ. दिपिन चन्द्र यादव

डॉ. राजेश कुमार

प्रकाशक: डॉ. आर.एस. श्योकन्द, निदेशक, विस्तार शिक्षा निदेशालय, लाला लाजपतराय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार ने डॉ. देवेन्द्र सिंह के सम्पादन में **डोरेक्स ऑफसैट प्रिन्टर्स, हिसार** से लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार के लिए मुद्रित करवा कर जुलाई, 2018 को प्रकाशित किया।

निर्देश: इस पत्रिका में प्रकाशित सामग्री वैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित है तथा लेखकों द्वारा पाठकों की जानकारी के लिए प्रस्तुत की गई हैं। सम्पादक, प्रकाशक व मुद्रक तथा लेखकों के द्वारा दी गई जानकारी के लिए उत्तरदायी नहीं हैं। ब्राँडेड दवाइयों व उत्पादों के नाम केवल उदाहरण के रूप में दिए हैं तथा इन्हें विश्वविद्यालय की ओर से सिफारिश न माना जाए। पाठकों को यह सलाह दी जाती है कि किसी भी जानकारी को प्रयोग में लाते समय विशेषज्ञों की सलाह लें। किसी भी त्रुटि के लिए सम्पादक से सम्पर्क किया जा सकता है। सभी विवादों का न्यायक्षेत्र हिसार न्यायालय होगा।

डॉ. गुरदयाल सिंह
कुलपति
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं
पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

संदेश

हमारे देश की आर्थिक व्यवस्था मुख्यतया: कृषि कार्यक्षेत्र पर आधारित है। पशुपालन कृषि का अभिन्न अंग है। पशुपालन के बिना देश की खाद्य व्यवस्था का प्रबंधन बहुत कठिन है। सच तो यह है कि बढ़ती जनसंख्या के कारण कम होते कृषि क्षेत्र ने आज पशुपालन को अत्याधिक प्रगतिशील क्षेत्र बना दिया है। पिछले कुछ दशकों में पशुपालन व्यवसाय में निरंतर वृद्धि देखने को मिली है। 19वीं अखिल भारतीय पशुधन–गणना के आंकड़ों के अनुसार सन् 2012 में भारत में पशुधन की संख्या 512 मिलियन थी। इसी के परिणाम स्वरूप हमारा देश विश्व में अधिकतम दुग्ध उत्पादक देश बना है। विश्व के कुल दूध उत्पादन के 13.1 प्रतिशत भाग का श्रेय हमारे देश को ही जाता है। परन्तु फिर भी भारत में प्रति व्यक्ति 252 ग्राम दूध ही उपलब्ध है, जो कि 265 ग्राम प्रति व्यक्ति विश्व की औसत से कम है।

बड़े हर्ष का विषय है कि हरियाणा प्रदेश में वर्ष 2014–15 में कुल 79 लाख टन दुग्ध उत्पादन हुआ जिस कारण हरियाणा के प्रति व्यक्ति को हर दिन 805 ग्राम दूध की उपलब्धता थी, जो विश्व की औसत से बहुत अधिक है। वर्ष 2015–16 में प्रदेश में दुग्ध उत्पादन और भी बढ़ कर 83 लाख टन हो गया है तथा अब हर दिन प्रति व्यक्ति 835 ग्राम दूध की उपलब्धता हो गई है। हरियाणा में इस प्रकार दुग्ध उत्पादन में एक वर्ष में 6 प्रतिशत की वृद्धि हुई जबकि विश्व स्तर पर औसत वृद्धि केवल 3 प्रतिशत के लगभग आँकी गई है।

पशुजन्य खाद्य पदार्थों की आवश्यकता निरन्तर बढ़ रही है। वर्ष 2009–10 के आँकड़ों के अनुसार, हरियाणा में पशुधन क्षेत्र का उत्पादन लगभग 18,000 करोड़ रुपये था जो कि खेती–बाड़ी उद्योग के सकल उत्पाद 37,000 करोड़ रुपये का लगभग 50 प्रतिशत था। इस क्षेत्र में किसानों की अपार सफलता की सम्भावना को देखते हुए हमारे विश्वविद्यालय द्वारा पूरे प्रदेश के किसानों के ज्ञान व कौशल वर्धन के लिए बड़े पैमाने पर कार्य किया जा रहा है। विस्तार शिक्षा निदेशालय की इन कार्यों में विशेष भूमिका है।

विश्वविद्यालय के विस्तार शिक्षा निदेशालय द्वारा प्रकाशित पशुधन ज्ञान पत्रिका वास्तव में वैज्ञानिकों के शोध, ज्ञान, विचार, परामर्श व अन्य लाभप्रद जानकारियों का विशाल स्रोत है। इस पत्रिका के नए अंक के प्रकाशन के अवसर पर विस्तार शिक्षा निदेशक, पत्रिका के सम्पादक व विश्वविद्यालय के वैज्ञानिक बधाई के पात्र हैं। किसान वर्ग, पशुपालक व पशु उत्पादों से सम्बंधित व्यवसायिओं से मेरा निवेदन है कि वे पत्रिका में दी गई जानकारियों को स्वयं संचित कर अन्य जनमानस में भी बाँटे ताकि यह ज्ञान शिक्षित और अशिक्षित सभी को लाभान्वित कर हमारे उद्देश्य की पूर्ति करे।

(गुरदयाल सिंह)

डॉ. आर.एस. श्योकन्द
निदेशक, विस्तार शिक्षा
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं
पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

संदेश

पर्यावरण में निरन्तर हो रहे परिवर्तन और कम होती जा रही कृषि योग्य भूमि के कारण किसानों की आर्थिक स्थिति पर बड़ा ही प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। विषम परिस्थितियों में कृषि के साथ-साथ पशुपालन अपना कर किसान अधिक आय अर्जित कर अपनी आर्थिक स्थिति सुधार सकते हैं। ग्रामीण इलाकों में नकद लाभ और लगातार आय का पशुपालन से बढ़िया और कोई विकल्प नहीं है। आज के युग में कृषि के विविधिकरण का बहुत महत्त्व है। आवश्यकता है कि कृषि के साथ-साथ किसान भाई पशुपालन, मुर्गीपालन, मछली पालन व पशुओं से प्राप्त होने वाले अन्य खाद्य पदार्थों के उत्पादन को व्यावसायिक रूप से अपनाएँ। हरियाणा प्रान्त ने प्रारम्भ से ही पशुपालन क्षेत्र में बहुत उन्नति की है।

कई बार लाभदायक होते हुए भी पशुपालन विषय पर वैज्ञानिक जानकारी न होने के कारण पशुपालकों को पूरा आर्थिक लाभ नहीं मिल पाता है। इसलिए कृषक वर्ग के लिए यह अति आवश्यक है कि उसे पशुपालन क्षेत्र में तकनीकी विकास की नवीनतम व लाभदायक जानकारी प्राप्त करवाई जाए। पशुपालकों के उत्थान में लाला लाजपतराय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार के वैज्ञानिकों का सराहनीय योगदान रहा है। जागरुक पशुपालक वैज्ञानिक विधियाँ अपनाकर आर्थिक रूप से लगातार सक्षम बन रहे हैं, परन्तु बहुत से पशुपालक ऐसे भी हैं, जिन्हें इन आधुनिक वैज्ञानिक विधियों का ज्ञान नहीं है। ऐसे किसानों को यह समझना चाहिए कि उन्नत वैज्ञानिक प्रणालियों को अपनाएँ बिना केवल परम्परागत तरीकों से कोई भी व्यवसाय विकसित रूप प्राप्त नहीं कर सकता क्योंकि परिवर्तन प्रकृति का नियम है।

पशुपालन के क्षेत्र में उच्चतम कोटि के तकनीकी विकास की आवश्यकता को देखते हुए विश्वविद्यालय अत्याधुनिक प्रयोगशालाओं में पशुओं से जुड़ी विभिन्न समस्याओं पर अनुसंधान कर उनके निवारण में कार्यरत है। यहाँ देश-विदेश से उच्च शिक्षा प्राप्त वैज्ञानिक किसानों की उन्नति के लिए सराहनीय कार्य कर रहे हैं। विश्वविद्यालय के विस्तार शिक्षा निदेशालय द्वारा प्रकाशित 'पशुधन ज्ञान' पत्रिका का वर्तमान अंक पाठकों को सौंपते हुए मुझे अत्यन्त प्रसन्नता हो रही है, क्योंकि इसके द्वारा पशुपालन से सम्बंधित हर प्रकार का ज्ञान पशुपालकों के घर-घर पहुँचेगा।

कृषक भाईयों व बहनों से विनम्र निवेदन है कि वे इस पत्रिका से अर्जित ज्ञान को अपना कर अन्य किसान पशुपालकों को भी बांटें। मैं विश्वविद्यालय के सभी वैज्ञानिकों, सहयोगी अधिकारियों व सम्पादकीय मण्डल का धन्यवाद करते हुए आग्रह करता हूँ कि वे भविष्य में भी इस पत्रिका द्वारा पशुपालकों को लाभान्वित करने में सदैव तत्पर रहें।

(आर.एस. श्योकन्द)

सम्पादक की कलम से...

किसान भाईयों, प्राचीन काल से ही मानवीय सभ्यता के विकास में पशुओं का बहुत ही महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। साल दर साल समय बदलता गया सभ्यता के विकास में शताब्दियों से निरंतर बदलाव होता गया। लकड़ी के घूमते चकरे ने बड़े भारी भरकम विमानों का रूप ले लिया फिर भी बैलगाड़ी, घोड़ा–घाड़ी और अन्य पशुओं का महत्त्व आज भी ज्यों का त्यों बना हुआ है। आधुनीकरण के वर्तमान युग में भी हम दूध–दही, मक्खन, पनीर, गोश्त, अण्डे व ऊन आदि भौतिक वस्तुओं के लिए पशुओं पर निर्भर हैं। वास्तव में वास्तविकता तो ये है कि हमारी खाद्य व्यवस्था ही न संभले यदि पशुपालन न किया जाए तो, क्योंकि बढ़ते पर्यावरण प्रदूषण और भूमंडलीय विपदाएँ जैसे अकाल, बाढ़ आदि में पशुधन ही आर्थिक संकट से निपटने का सस्ता और सरल साधन है। कृषि के साथ आसानी से होने के कारण इस पर खर्चा भी कम होता है। वैसे भी बढ़ती जनसंख्या के साथ हमारी जमीन बढ़ने वाली है नहीं। पीढ़ी दर पीढ़ी परिवारों में सदस्य तो बढ़ते हैं पर किसान के पास उनको बाँटने के लिए प्रर्याप्त भूमि सम्पदा नहीं होती। कम कृषि भूमि में कृषि के साथ पशुपालन ही किसानों का एक अच्छा सहारा बन सकता है। जिससे वह घर की आर्थिक जरूरतें पूरी कर सकता है।

मनुष्य पृथ्वी पर सबसे बुद्धिमान प्राणी है, यदि मानव जाति पशुपालन से लाभ कमाने के लिए अपनी बुद्धि और विवेक से काम लेकर प्राचीन रुढ़िवादी तरीकों से हट कर नये वैज्ञानिक तरीकों से पशुपालन करें तो भाईयों इसमें कोई शक नहीं कि वह पशुपालन में भी पैसा और नाम दोनों प्राप्त कर सकता है। हमारे विश्वविद्यालय द्वारा लगाए गए समय–समय पर मेलों और प्रदर्शनियों में उन्नत पशुपालकों को सम्मानित भी किया गया है। अखबारों और पत्र– पत्रिकाओं में उनका नाम भी हुआ है। हमारी महिला बहनें पशुधन की सेवा बड़े ही सेवाभाव से करती हैं।

भारत में पशुपालन से सम्बंधित बहुत से विश्वविद्यालय हैं, जिनमें लाला लाजपतराय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार भी बहुत विख्यात है। इस विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों ने पशुपालन से सम्बंधित अनेकों शोध कार्य किए हैं, जो पशु प्रजनन, पशु नस्ल सुधार, पशु आवास, पशु आहार व घातक बीमारियों के निवारण से जुड़े हुए हैं। इन शोध कार्यों के द्वारा जनकल्याण की भावना को बढ़ावा देना ही इनका मुख्य उद्देश्य है।

हमारे विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों की वैज्ञानिक सोच केवल हम तक न रहे, इस उद्देश्य को सम्मुख रख इस सोच और नई तकनीक को घर–घर पहुँचाने के लिए इस ज्ञान को पशुधन–पत्रिका के रूप में संचित कर दिया है। आपको यह जानकर भी खुशी होगी कि इस संचित ज्ञान को पशुधन–पत्रिका के अंक के रूप में आपके पठन–पाठन लायक बना कर प्रस्तुत किया जा रहा है। इस पत्रिका में पशु नस्लों की जानकारी, नस्ल सुधार, पशु आवास प्रबंधन, पशु आहार प्रबंधन विभिन्न मौसमों में पशुओं की देखभाल, घातक बीमारियों से बचाव, टीकाकरण, गर्भकाल में पशुओं की देखभाल, जीवाणु–विषाणु जनित रोग, दुग्ध और माँस उत्पादन, सफल पशुपालक की कहानी आदि विषयों पर जानकारी आपको मिलेगी। यह पत्रिका आपके लिए बहुत ही ज्ञानवर्धक व उपयोगी सिद्ध होगी। मेरा पशुपालकों से करबद्ध निवेदन है कि पत्रिका में बताई गई दवाइयों को चिकित्सक की सलाह लेकर ही पशुओं को दीजिए।

अन्ततः मुझे आशा है कि यह पत्रिका किसानों, पशुपालकों व पशुपालन से जुड़े व्यवसायिक समुदाय के लिए बहुत ही लाभदायक सिद्ध होगी। मैं इस पत्रिका के वर्तमान अंक के सफल प्रकाशन के लिए कुलपति लुवास, विस्तार शिक्षा निदेशक, वैज्ञानिकगण और संपादकीय मंडल का बहुत–बहुत आभार प्रकट करते हुए हार्दिक धन्यवाद करता हूँ।

(देवेन्द्र सिंह)

विषय सूची

क्र.सं.	विषय	लेखक	पृष्ठांक
1.	पशुओं में टिटनेस रोग	राजेन्द्र यादव, विनय कुमार एवं रिक्की झांभ	1
2.	डेयरी प्रसंस्करण	सुमित महाजन, जनाइलिन एस. पापांग एवं शालिनी अरोड़ा	4
3.	गाय और भैंस की प्रसव–काल के दौरान देखभाल एवं प्रबंधन	अमरजीत बिसला, विनय यादव एवं सुभाष चंद गहलोत	6
4.	दूध निकालने की स्वचालित मशीन फायदे एवं नुकसान	इंदु पांचाल, रूबी सिवाच एवं नेहा चौधरी	8
5.	पशुओं में हीटस्ट्रोक–लक्षण, उपचार व बचाव	विकास जागलान, मनीषा पूनिया एवं गौरव चराया	10
6.	पशुओं में मद जांचने के सरल तरीके	करन शर्मा, अमन प्रकाश ढाका एवं शिवगौड़ा पाटिल	12
7.	पशु प्रजनन में खनिज लवणों की महत्वता	अमन प्रकाश ढाका, विनय कुमार एवं करन शर्मा	14
8.	गाय भैंस में रेबीज–एक घातक रोग	वंदना भनोट, अनीता गांगुली एवं रणबीर सिंह बिसला	16
9.	पशुओं में मिश्रित संक्रमणः लक्षण, निदान एवं रोकथाम	अजय गौतम एवं शालिनी शर्मा	18
10.	पशु परिवहन में तनाव व निदान	दिनेश गुलिया, प्रवीन कुमार एवं दिपिन चन्द्र यादव	19
11.	दुधारू भैंसों की आहार व्यवस्था	सज्जन सिंह, राजेन्द्र सिंह एवं दलजीत सिंह	20
12.	कुक्कुट आहार बनाना, खिलाना और सम्भाल	धर्मवीर सिंह दहिया, रमेश कुमार एवं देवेन्द्र सिंह	23
13.	अश्व ग्रन्थि रोग (ग्लैन्डर्स)	दिनेश गुलिया, प्रवीन कुमार और दिपिन चन्द्र यादव	26
14.	मुर्गियों में एसाइटिस रोग	धर्मवीर सिंह दहिया, रमेश कुमार, देवेन्द्र सिंह	27
15.	पशुओं में मिट्टी खाने की समस्या	मनजीत, आर्यन, राजेश दलाल	30
16.	बकरी की (पी.पी.आर) बीमारी	लक्ष्मी बाई, रामकरण एवं प्रीति	31
17.	पशुओं में ब्याने की अवधि में होने वाले प्रमुख रोग	राजेन्द्र यादव, संदीप एवं पंकज कुमार	33
18.	प्रकृति का भोजनः बकरी दूध	वंदना चौधरी एवं सुमन बिश्नोई	37
19.	पशुओं में लंगड़िया रोग (ब्लैक क्वार्टर)	राजेन्द्र यादव, संदीप एवं पंकज कुमार	39

पशुओं में टिटनेस रोग

[1]राजेन्द्र यादव, [2] विनय कुमार, एवं [3]रिक्की झांभ

[1]क्षेत्रीय पशु रोग चिकित्सा, निदान एवं विस्तार केन्द्र, महेन्द्रगढ़,
[2]पशु जैव प्रौद्योगिकी विभाग, [3]पशु औषधि विज्ञान विभाग
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार।

यह रोग होता है क्या?

धुनषबाय को अंग्रेजी भाषा में टिटनेस के नाम से जाना जाता है, जो कि इसका ज्यादा प्रचलित नाम है। धुनषबाय क्लोस्ट्रीडियम टिटेनाई नामक जीवाणु से पशुओं में होने वाला एक घातक संक्रामक रोग है। कई जगह इस रोग को स्थानीय भाषा में धनुष्टंकार के नाम से भी जाना जाता है लगभग सभी प्रजाति के पशुओं के साथ–साथ यह रोग मनुष्य में भी पाया जाता है। घोड़े एवं खच्चर प्रजाति के पशु इस रोग के लिए अन्य पशुओं से ज्यादा संवेदनशील होते हैं। प्रायः भेड़, बकरी एवं सुकर प्रजाति के पशुओं में भी यह रोग बहुतायत में देखने को मिल सकता है। सामान्यतः श्वान एवं गाय प्रजातियों में इस रोग की संवेदनशीलता एवं होने की संभावना काफी कम होती है।

यह रोग कैसे एवं क्यों होता है?

क्लोस्ट्रीडियम टिटेनाई नामक जीवाणु एवं इससे उत्पन्न विष के कारण धनुषबाय रोग होता है। धनुषबाय अथवा टिटनेस रोग एक मिट्टी/मृदा जनित रोग हैं, क्योंकि इसके कारक जीवाणु मिट्टी में बहुतायत में पाए जाते हैं। इन जीवाणुओं की स्पोर (बीजाणु) अवस्था मिट्टी एवं पशुओं के गोबर इत्यादि में कई वर्षों तक जीवित रह सकती हैं, जो कि पशुओं एवं मनुष्य में इस रोग के संक्रमण का कारण बन सकते हैं। सामान्यतः इस जीवाणु प्रतिरोध तरीकों के प्रति असंवेदनशील होते हैं। किसी नुकीली वस्तु एवं लोहे की वस्तु से पशु के शरीर पर होने वाले गहरे घाव मुख्य रूप से इस रोग के संक्रमण का कारण बनते हैं। पशुओं के शरीर पर यह घाव किसी नुकीली वस्तु, बधियाकरण, रोम–कर्तन, कर्ण छेदन या जनन के समय किसी चोट की वजह से हो सकते हैं एवं धनुषबाय का कारण बन सकते हैं। इस रोग के जीवाणु का संक्रमण पशु की जेर हाथ से निकालने या पशु के ब्यानें के दौरान मदद करते समय साफ–सफाई का ध्यान ना रखने की वजह से भी हो सकता है। पशुओं के बाल एवं खासकर भेड़ की ऊन काटने के समय होने वाले घाव भी इस रोग के संक्रमण का कारण बन सकते हैं। पशुओं के नवजात बच्चों में नाल पर हुए घाव से भी इस रोग के होने का खतरा रहता है। खेतीबाड़ी या अन्य कृषि कार्यों के लिए काम में आने वाले पशुओं में पैरों में चोट लगना स्वाभाविक हैं, जिसकी वजह से भी इन पशुओं में टिटनेस रोग होने की संभावना बनी रहती है।

पशुओं में शल्य–चिकित्सा के दौरान अगर साफ–सफाई का ध्यान नहीं रखा जाता एवं उपयुक्त ईलाज नहीं किया जाता है, तो भी इस रोग के पनपने की संभावना ज्यादा रहती है। पशुओं में किसी भी तरह की चिकित्सा के दौरान काम में लाई जाने वाली सुई या अन्य को औजार अगर पूरी तरह साफ–सुथरे तथा जीवाणु–रहित नहीं हो तो भी धनुषबाय रोग होने की संभावना बनी रहती है। अतः यहां पर यह कहना अधिक उचित होगा कि पशु के शरीर पर होने वाले किसी भी प्रकार के घाव खासकर गहरे घाव को अगर साफ–सुथरा एवं जीवाणु रहित नहीं रखा जाता एवं अगर घाव पर मिट्टी लगी रहती है, तो ऐसे पशुओं में धनुषबाय/टिटनेस रोग होने की संभावना ज्यादा रहती है।

इस रोग में पाए जाने वाले लक्षण क्या–क्या हैं?

धुनषबाय रोग के लिए जिम्मेदार क्लोस्ट्रीडीय टिटेनाई नामक जीवाणु से उत्पन्न होने वाले विष की प्रकृति स्नायु–तंत्र को प्रभावित करने वाली होती है। इसलिए इस रोग से प्रभावित पशुओं में पशु में कान खड़े होना उठी हुई पूंछ, गर्दन में खिचांव, अति संवेदनशीलता तथा उत्तेजना इत्यादि

लक्षण दिखाई देते हैं। बकरियों में खासकर माँसपेशियों में खिचांव की वजह से उनका पूरा शरीर लकड़ी की तरह अकड़ जाता है। टिटनेस से प्रभावित पशुओं की तीसरी पलक उभर जाती है। पशुओं खासकर गाय एवं भैंस प्रजातियों में उनकी पूंछ हैंडपम्प के हैंडिल की तरह मुड़ी हुई प्रतीत होती है। पशुओं के जबड़ो में अत्यधिक जकड़न एवं खिचांव होने के कारण चारा–पानी लेने में कठिनाई होती है, अतः इस अवस्था को ''लॉक–जा'' भी कहा जाता है। अत्यधिक प्रभावित पशु धराशायी हो जाता है एवं मौत भी हो सकती है। धनुषबाय से प्रभावित पशुओं में इस रोग के उत्पन्न होने वाले लक्षणों का प्रकार एवं मात्रा इस रोग के जीवाणुओं द्वारा शरीर में उत्पन्न विष की मात्रा पर निर्भर करती है। इस रोग के शुरूआती दौर में प्रभावित पशुओं में चलने के दौरान अकड़न देखने को मिलती है। माँसपेशियों की जकड़न एवं जुगाली कम या बन्द होने की वजह से इस रोग से प्रभावित पशुओं में अफारा भी देखने को मिलता है। बाद की अवस्था में इस रोग से प्रभावित पशु के शरीर की लगभग सभी माँसपेशियां जकड़ जाती हैं, जिसकी वजह से पशु को सांस लेने एवं अन्य सभी शारीरिक क्रियाओं में काफी कठिनाई महसुस होती है, तथा इस रोग से प्रभावित पशु की मृत्यु भी छाती की माँसपेशियों में अत्यधिक जकड़न की वजह से सांस बंद होने के कारण होती है।

इस रोग की पहचान कैसे करें?

पशुओं में धनुषबाय अथवा टिटनेस नामक रोग की पहचान के लिए वैसे तो इसके लक्षण की काफी हद तक पर्याप्त होते हैं। ऊपर दिए गए लक्षणों में से कोई भी लक्षण पशु में दिखाई देने पर तुरंत अपने नजदीकी पशु–चिकित्सक से संपर्क करके इस रोग की पहचान करवानी चाहिए। लक्षणों के आधार पर पहचाने के अतिरिक्त इस रोग में पशु के खुन की जाँच एव शरीर पर घाव अथवा चोट से निकलने वाले पानी जैसे द्रव्य की जाँच करवाकर भी इस रोग का पता लगाया जा सकता है।

इस रोग का उपचार क्या–क्या है?

पशुपालकों के लिए यह विशेष ध्यान देने की बात है कि पशुओं में धुनषबाय/टिटनेस रोग की चिकित्सा या उपचार इसकी अन्तिम अवस्था में सम्भव नहीं है। अतः पशु में इस रोग के शुरूआती लक्षण दिखाई देते ही यथासम्भव जितना जल्दी हो सके इस रोग का उपचार शुरू करवा देना चाहिए। पशु चिकित्सकों द्वारा इस रोग के उपचार के लिए पेनीसीलीन नामक एंटीबायोटीक का प्रयोग किया जाता है। अत्यधिक द्रव्य (ग्लुकोज/सलाईन) का रक्त मार्ग से प्रयोग भी इसके ईलाज के दौरान पशु–चिकित्सक द्वारा किया जाता है, जो कि पशु के शरीर से इसके जीवाणु द्वारा किया जाता है, जो कि पशु के शरीर से इसके जीवाणु द्वारा उत्पन्न विष की मात्रा को बाहर निकालने में अति प्रभावकारी है। टिटनेस ऐंटीटोक्सिन का प्रयोग भी इस रोग की चिकित्सा में अति प्रभावकारी सिद्ध हो सकता है। इसके अतिरिक्त, पशु के शरीर पर जिस घाव या चोट की वजह से धनुषबाय रोग हुआ है, उसकी भी अच्छी तरह से साफ–सफाई एवं चिकित्सा बहुत जरूरी है। अतः पशुपालकों को यह सलाह दी जाती है कि पशु में धनुषबाय रोग के लक्षण दिखाई देने पर तुरंत अपने नजदीकी पशु–चिकित्सक से पशु का उचित एवं पूरा उपचार करवाना चाहिए। इस रोग के उपचार में देरी आपके पशु की मौत का कारण भी बन सकती है।

इस रोग से बचाव एवं रोकथाम के उपाय क्या–क्या हैं?

पशुओं में धनुषबाय या टिटनेस रोग की रोकथाम एवं बचाव के लिए पशुपालकों को निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए :–

1. पशु के शरीर के किसी भी हिस्से पर हुए घाव या चोट खासकर गहरे घाव को अच्छी तरह से साफ करना चाहिए। इसके साथ–साथ घाव अथवा चोट को हवा लगने दें एवं हाइड्रोजन परऑक्साइड से उपचारित करें क्योंकि इस रोग के जीवाणु ऐसे घाव या गहरी चोट में ज्यादा पनपते हैं जहाँ की हवा (ऑक्सीजन) की कमी होती है।
2. पशुओं में 3–4 महीने की उम्र पर टीटनेस टॉक्साइड (टी.टी.) का टीका लगवा सकते हैं। इसके साथ–साथ ग्याभिन पशुओं में गर्भावस्था की अन्तिम अवस्था में एक महीने के अन्तराल पर टी.टी. के दो टीके लगवाने चाहिए।

3. पशुओं की ऐसी प्रजातियों जिनमें की यह रोग ज्यादा होता है जैसे कि घोड़े एवं खच्चर में इस रोग की रोकथाम के लिए खास ध्यान रखना चाहिए। खासकर घोड़ों में पैरों में नाल लगवाते समय टी.टी. का टीका अवश्य लगवाना चाहिए।

4. ब्यांत के समय के दौरान पशु एवं पशु के बाड़े की साफ–सफाई का विशेष तौर पर ध्यान रखना चाहिए। ऐसे पशु जिनकी जेर हाथ से निकलवाई हो या जिन पशुओं में पाछा दिखाने की शिकायत हो में साफ–सफाई का विशेष ध्यान देना चाहिए।

5. पशुओं में होने वाली किसी भी प्रकार की छोटी या बड़ी शल्य चिकित्सा के दौरान हुए घाव/चीरे की ड्रेसींग या मरहम–पट्टी के दौरान साफ–सफाई का ध्यान रखना चाहिए। इस दौरान प्रयोग में लाए जाने वाले उपकरण एवं अन्य औजार भी साफ–सुथरे एवं जीवाणु रहित होने चाहिए।

6. पशुओं में किसी भी प्रकार की चोट लगने से बचाने के लिए पशुपालकों को विशेष ध्यान रखना चाहिए। खेतों या चारागाहों की बाड़ पर लगे हुए नुकीले एवं जंग लगे हुए तारों से लगनी वाली चोट से पशुओं को बचाना चाहिए।

7. पशुओं में बाल या ऊन काटने, बंधियाकरण, रोम कर्तन या कर्ण छेदन इत्यादि के दौरान होने वाले किसी भी घाव की साफ–सफाई से देखभाल करनी चाहिए तथा ध्यान रखना चाहिए कि इस दौरान कोई घाव पशु के शरीर पर होना ही नहीं चाहिए।

8. पशु के नवजात बच्चों में नाल पर हुए घाव के लिए कोई लापरवाही नहीं बरतनी चाहिए एवं इसकी नियमित रूप से मरहम–पट्टी करनी चाहिए।

9. पशुओं में किसी भी तरह का टीका या इंजेक्शन लगाने के लिए हमेशा नई सुई का एवं प्रत्येक पशु के लिए अलग सुई का प्रयोग करना चाहिए।

10. पशु के शरीर पर कोई भी चोट लगने पर खासतौर पर जंग लगे हुए नुकीले तारों से हुए गहरे घाव पर पशु को टिटनेस टॉक्सोईड (टी.टी.) का टीका अवश्य लगवाएं।

11. उपरोक्त सभी सावधानियों के अलावा पशुओं में टिटनेस या धनुषबाय रोग के कोई भी लक्षण दिखाई देने पर शुरूआत में ही तुरंत अपने नजदीकी पशु–चिकित्सक से पशु का उचित एवं पूरा ईलाज करवाएं।

930-000-0857

whatsapp

लुवास पशुपालक हेल्पलाइन नम्बर

डेयरी प्रसंस्करण

[1]सुमित महाजन, [2]जनाइलिन एस. पापांग एवं [1]शालिनी अरोड़ा

[1]डेयरी विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी महाविद्यालय, लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

[2]डेयरी अर्थशास्त्र, सांख्यिकी एवं प्रबंधन विभाग, राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान, करनाल।

श्वेत क्रांति के दौरान भारत में डेयरी सहकारी संघों के अंतर्गत डेयरी प्रसंस्करण संयंत्रों को बड़ी संख्या में चालू किया गया। इनमें से ज्यादातर संयंत्रों का आधुनिकीकरण या विस्तार कभी नहीं किया गया और परिणामस्वरूप वह पुराने और अप्रचलित प्रौद्योगिकियों के साथ काम कर रहे हैं। डेयरी सहकारी संस्थान, दूध उत्पादकों को अधिकतम बिक्री प्राप्ति (आमतौर पर लगभग 75–80 प्रतिशत) और उपभोक्ताओं को सुरक्षित किफायती मूल्य उपलब्ध कराते हैं। नतीजतन, वे डेयरी प्रसंस्करण बुनियादी ढांचे के आधुनिकीकरण और विस्तार में निवेश करने में असमर्थ हैं क्योंकि उनके पास अपेक्षाकृत कम लाभांश के कारण सीमित संसाधन हैं। यह सुनिश्चित करने के लिए कि डेयरी सहकारी संस्थान किसानों के निरंतर लाभ के लिए प्रतिस्पर्धी बनेगी, भारत सरकार ने नाबार्ड के तहत डेयरी प्रसंस्करण और डेयरी प्रसंस्करण और इन्फ्रास्ट्रक्चर डेवलपमेंट फंड (डी.आई.डी.एफ.) की स्थापना 2017–18 के केंद्रीय बजट में घोषणा की, जिसमें कुल मिलाकर धनराशि रु 8000 करोड़ रहेगी जो कि 3 वर्षों की अवधि में (यानी 2017–18 से 2019–20) प्रदान की जायेगी। भारत सरकार ने 21 दिसंबर 2017 को डी.आई.डी.एफ. का प्रशासनिक अनुमोदन जारी किया है। डी.आई.डी.एफ. योजना रु 10,881 करोड़ के कुल निवेश परिव्यय के साथ कार्यान्वित की जाएगी जिसमें नाबार्ड से 8004 करोड़ रुपए ऋण के रूप में, 2000 करोड़ रुपए अंतिम उधारकर्ताओं के योगदान से, 864 करोड़ रूपये भारत सरकार द्वारा ब्याज छूट के रूप में, और 12 करोड़ रूपये राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड (एन.डी.डी.बी.) और राष्ट्रीय सहकारी डेयरी निगम (एन.सी.डी.सी.) से योगदान के रूप में एकत्रित किये जायेंगे। इस योजना के मुख्य उद्देश्य हैं:

1. पुराने संयंत्रों का आधुनिकीकरण और नए दूध प्रसंस्करण के बुनियादी ढांचे और मूल्य वर्धित उत्पाद बनाने की सुविधाओं का निर्माण करना।
2. प्रसंस्करण संयंत्रों में दक्षता लाना जिससे उत्पादकों को दूध का इष्टतम मूल्य और उपभोक्ताओं को शुद्ध दूध प्राप्त हो सके।
3. संगठित क्षेत्र में निर्माता स्वामित्व संस्थाओं की हिस्सेदारी बढ़ाने और संगठित तरल दूध बाजार में एक प्रमुख खिलाड़ी के रूप में जारी रखना।

इस योजना के मुख्य घटक हैं: आधुनिकीकरण और नए दूध प्रसंस्करण सुविधाओं का निर्माण; मूल्यवर्धित उत्पाद (वीएपी) के लिए विनिर्माण सुविधाए; ग्राम स्तर पर द्रुतशीतन बुनियादी ढांचे का निर्माण (बी.एम.सी.) एवं इलेक्ट्रॉनिक दूध परीक्षण उपकरणों की स्थापना।

यह योजना पूरे देश में लागू की जाएगी। इस योजना के अंतर्गत सहकारी डेयरी संघ, राज्य सहकारी डेयरी महासंघ, बहु–राज्य डेयरी सहकारी संस्थान, दूध उत्पादक कंपनियां एवं एन.डी.डी.बी. सहायक कंपनियां योग्य अंत कर्जदार होंगी। इस योजना के तहत वित्त सहायता ब्याज

वाले ऋण के रूप में होगी जिसमे ऋण घटक 80 प्रतिशत (अधिकतम) और उधारकर्ता का अंशदान 20 प्रतिशत (न्यूनतम) होगा। ऋण चुकाने की अधिकतम अवधि 10 साल होगी, जिसमें मूलधन की पुनर्भुगतान पर अधिकतम 2 साल की अधिस्थगन अवधि शामिल होगी। उधारकर्ताओं को ब्याज की दर प्रतिवर्ष 6.5 प्रतिशत होगी। ब्याज का मासिक आधार पर अंत कर्जदार द्वारा भुगतान किया जाएगा। ब्याज के भुगतान पर कोई अधिस्थगन अवधि नहीं होगी। अधिस्थगन अवधि पूर्ण होने के बाद मूलधन का मासिक आधार पर भुगतान किया जाएगा। यदि अंतिम उधारकर्ता संस्थायें निर्धारित तारीख पर ऋण किस्तों को चुकाने में विफल रहती हैं तो उन्हें बची हुइ डिफॉल्ट राशि पर सामान्य ब्याज दर से 3 प्रतिशत अधिक देना होगा। योजना के तहत प्रस्ताव प्रस्तुत करने की प्रक्रिया इस प्रकार है:

चरण 1 : अंतिम उधारकर्ता द्वारा एनडीडीबी के क्षेत्रीय कार्यालय को डीपीआर (डिटेल प्रोजेक्ट रिपोर्ट) तैयार कर जमा करेगा।

चरण 2 : एन.डी.डी.बी. प्रस्ताव का मूल्यांकन करेगा और अपने सुझाव एस.पी.एस.आर.सी. को सूचित करेगा।

चरण 3 : एस.पी.एस.आर.सी. राज्य सरकार की गारंटी के लिये प्रतिबद्धता पत्र और पी.एस.सी को प्रस्ताव की सिफारिश की व्यवस्था करेगा।

चरण 4 : पी.एस.सी परियोजना प्रस्ताव का अनुमोदन करेगी।

चरण 5 : एन.डी.डी.बी. स्वीकृति पत्र जारी करेगा।

एन.डी.डी.बी. को परियोजना का प्रस्ताव प्रस्तुत करने के बाद, एन.डी.डी.बी. में स्थित कार्यान्वयन एवं निगरानी विभाग (आई.एम.सी.) प्रस्ताव की आवश्यकता या प्रासंगिकता के संदर्भ में, उसके तकनीकी–आर्थिक व्यवहार्यता के संबंध में अंतिम उधारकर्ता की दक्षता के अलावा प्रस्ताव का मूल्यांकन किया जाएगा। एन.डी.डी.बी. द्वारा प्रस्ताव के अनुमोदन के बाद, नाबार्ड को स्वीकृति के लिए भेजा जाएगा। नाबार्ड द्वारा परियोजना प्रस्ताव मंजूर होने के बाद, एन.डी.डी.बी. में स्थित आई.एम.सी. उधारकर्ता को ऋण की मंजूरी और ऋण के नियम और शर्तें बताएगा।

वर्तमान में चल रहीं परियोजनाओं के लिए अन्य वित्तीय संस्थाओं से उपलब्ध ऋण भी डी.आई.डी.एफ. योजना के तहत ऋण में बदले जाने पर भी सरकार विचार कर सकती है पर इसके लिए निम्नलिखित शर्तों को पूरा करना आवश्यक रहेगा –:

- योग्य अंत कर्जदार को संबंधित वित्तीय संस्थान वित्तपोषण एजेंसियों से अनिच्छा प्रमाणपत्र (एनओसी) प्राप्त करना होगा।
- योग्य अंत कर्जदार को डीआईडीएफ स्कीम के तहत परिभाषित सभी पात्रता मानदंडों के लिए अर्हता प्राप्त करनी होगी।
- विचाराधीन परियोजना के संबंध में कानून के न्यायालय में कोई मामला या विवाद लंबित नहीं होना चाहिए।
- डीआईडीएफ स्कीम के नियमों और शर्तों के मुताबिक परियोजना की लागत, खरीद प्रक्रिया और व्यवहार्यता का पुनर्मूल्यांकन करना होगा।
- राज्य सरकार की गारंटी सहित पर्याप्त सुरक्षा प्रदान करने के लिए योग्य अंत कर्जदार की क्षमता का आंकलन।

इस निवेश से लगभग 50,000 गांवों में 95,00,000 किसानों को लाभ होगा। 126 लाख लीटर (प्रतिदिन) की अतिरिक्त दूध प्रसंस्करण क्षमता, 210 मीट्रिक टन दूध (प्रतिदिन) की सुखाने की क्षमता, 140 लाख लीटर दूध (प्रतिदिन) की शीतलन क्षमता, 28000 बल्क मिल्क कूलर (बी.एम.सी) की स्थापना के अतिरिक्त इलेक्ट्रॉनिक दूध मिलावटी परीक्षण उपकरण और 59.78 लाख लीटर दूध के बराबर मूल्यवर्धित उत्पाद (प्रतिदिन) की निर्माण क्षमता का सृजन किया जाएगा। प्रारंभ में, सरकार 12 राज्यों के 39 लाभ कमाने वाले डेयरी सहकारी संघों के साथ परियोजना शुरू करेगी। अन्य डेयरी सहकारी संघ जो अपने नेट वर्थ और लाभ स्तर के आधार पर पात्र बनते हैं, बाद के वर्षों में, डी.आ.ई. डी.एफ. के तहत ऋण के लिए आवेदन कर सकते हैं।

डी.आई.डी.एफ. योजना के कार्यान्वयन से कुशल, अर्द्ध कुशल और अकुशल श्रमशक्ति के लिए प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रोजगार के अवसर पैदा होंगे। सरकार के अनुमान के मुताबिक लगभग 40,000 लोगों के लिए प्रत्यक्ष और लगभग 2 लाख लोगों के लिए अप्रत्यक्ष रोजगार के अवसर योजना की गतिविधियों के माध्यम से पैदा होंगे।

गाय और भैंस की प्रसव-काल के दौरान देखभाल एवं प्रबंधन

[1]अमरजीत बिसला, [2]विनय यादव एवं [2]सुभाष चंद गहलोत

पशु प्रजनन विभाग, भारतीय पशु चिकित्सा अनुसन्धान संस्थान, इज्जतनगर-(उ.प्र.)

[2]मादा पशु एवं प्रसूति रोग विभाग, लाला लाजपत राय पशुचिकित्सा एवं पशुविज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार।

परिचय

प्रसव–काल एक मादा पशु के प्रजनन जीवन में सामान्य शारीरिक प्रक्रिया है। एक गर्भवती पशु को अग्रिम गर्भावस्था के दौरान किसी भी तरह की देरी या लापरवाही करने से पशु कठिन प्रसव की अवस्था में जा सकता है जो भ्रूण या मां या दोनों की मृत्यु का कारण भी बन सकती है इसलिए प्रसव अवधि के दौरान पशु की देखभाल करना अत्यंत महत्वपूर्ण हैं।

प्रसव से पहले पशुओं की देखभाल और प्रबंधन

1. अग्रिम गर्भवती पशु का दूसरे पशुओं से अलगाव– अग्रिम गर्भवती पशु को दूसरे पशुओं से अलग कर देना चाहिये ताकि उनकी विशेष देखभाल की जा सके। उग्र पशु गर्भवती पशुओं को नुकसान पहुंचा सकते हैं इसलिए गर्भवती पशु का अलगाव जरूरी है। जानवर के लिए साफ और शुष्क बैठने की जगह होनी चाहिए।

2. गर्भावस्था के अंतिम दिनों में पशु को ज्यादा घास व हरा चारा नहीं देना चाहिये क्योंकि उससे पशु को चलने एवं उठने–बैठने में दिक्कत आती है।

3. गर्भावस्था के अंतिम दिनों में पशु को ज्यादा कैल्शियम वाले पदार्थ नहीं खिलाने चाहिये क्योंकि इससे पशु को प्रसव के बाद दिक्कत आ सकती है।

4. अग्रिम गर्भावस्था में पशु को जोहड़ (तालाब) में नहीं ले जाना चाहिये क्योंकि इससे पशु की बच्चेदानी का घुमने का डर रहता है जिससे भ्रूण की गर्भ के अंदर ही मृत्यु हो सकती है एवं पशु की जान को भी खतरा रहता है।

5. गर्भावस्था के अंतिम दिनों में होने वाली बिमारियों में पशु का पीछा दिखाना एवं बच्चेदानी का घूमना मुख्य है जोकि गाय की बजाए भैंस में अधिक पाए जाते हैं।

प्रसव के दौरान पशु की देखभाल

गाय एवं भैंस में प्रसव अवधि को मुख्यतः तीन भागों में बाँटा जाता है जिनका पशुपालक को अवश्य पता होना चाहिये ताकि सामान्य प्रसव को कठिन प्रसव से अलग पहचाना जा सके और समय रहते पशु का इलाज करवाया जा सके।

क) प्रसव–काल की पहली अवस्था के लक्षण–

- पशु के पुठे ढीले पड़ जाना
- खाना–पीना कम कर देना
- पशु के थनों में दूध का उतर आना
- पशु की योनी का सूजना एवं ढीला हो जाना
- पशु को बेचैनी होना जिससे वह बार–बार उठता एवं बैठता है
- प्रसव–काल की पहली अवस्था पशु के गर्भाशय से पानी की पहली थैली के फटने के साथ ही खत्म हो जाती है
- प्रसव–काल की पहली अवस्था की सामान्य अवधि छह घंटे तक की होती है

ध्यान रखने योग्य बातें

- अगर अग्रिम गर्भवती पशु 12 घंटे से ज्यादा समय तक बेचैनी में रहता है और खाना–पीना छोड़ देता है तो उसकी तुरंत पशु चिकित्सक से जाँच करवानी चाहिये ताकि समय रहते कठिन प्रसव को सुलझाया जा सके।
- पशु को ताजा पानी पिलाना चाहिये।
- प्रसव–काल के लक्षणों का ध्यान रखना चाहिये।
- प्रसव से पहले पशु के थनों से दूध नहीं निकलना चाहिये।

ख) प्रसव–काल की दूसरी अवस्था के लक्षण–

- प्रसव–काल की यह अवस्था सामान्यत 1–3 घंटे की होती है लेकिन पहली बार ब्याने वाले पशुओं में यह अधिक समय तक भी रह सकती है।

क. गाय की यौनी के बाहर पानी की थैली

- पानी की पहली थैली के फटने के साथ ही बच्चे के अगले पैर योनी के बाहर दिखने लगते हैं और पशु जोर लगाने लगता है।
- अगर बच्चा सही अवस्था में हो तो लगभग एक घंटे के अन्दर प्रसव की प्रक्रिया पूरी हो जाती है।

ध्यान रखने योग्य बातें

- यदि पशु एक घंटे से अधिक समय से जोर लगा रहा हो और बच्चा बाहर नहीं आता है तो तुरंत पशु चिकित्सा की सलाह लेनी चाहिये एवं पशु की जाँच करवानी चाहिये।
- बच्चे के योनी से बाहर निकलते वक्त उसे सहारा देना चाहिये लेकिन इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि पशु एवं बच्चे को चोट ना पहुँचे।

ख. सामान्य प्रसव के दौरान बच्चे की अवस्था

- बच्चे के पैदा होते ही उसे तुरंत माँ के सामने कर देना चाहिये।

ग) प्रसव–काल की तीसरी अवस्था के लक्षण–

- बच्चे के पैदा होने के 6–12 घंटे के अन्दर पशु सामान्यत जेर डाल देता है जिसे प्रसव काल की तीसरी अवस्था कहा जाता है।
- अगर 12 घंटे तक भी पशु जेर नहीं डालता है तो तुरंत पशु चिकित्सक से सलाह लेनी चाहिये क्योंकि जेर का गर्भाशय के अन्दर रहने से पशु के शरीर में संक्रमण फैल सकता है जिससे पशु के दोबारा गाभिन होने में देरी होती है।

ध्यान रखने योग्य बातें

- प्रसव के उपरांत पशु को गुनगुना पानी पिलाना चाहिये।
- पशु को जेर खाने से रोकना चाहिये।
- जेर को गहरे गड्डे में दबा देना चाहिये।
- पशु एवं बच्चे के शरीर को कपड़े से साफ करना चाहिये।
- प्रसव के बाद पशु को गुड़ और पिसा हुआ अनाज खिलाना चाहिये ताकि उसे ताकत मिल सके।

प्रसव के बाद दूध/खीस (माँ का पहला दूध) निकालना

- प्रसव के बाद खीस निकलने से पहले पशु के थनों को गुनगुने पानी के साथ साफ करना चाहिये।
- प्रसव के बाद खीस निकालते वक्त यह ध्यान रखना चाहिये कि थनों में कोई रूकावट या सूजन ना हो।
- प्रसव के आधे से एक घंटे के उपरांत ही बच्चे को खीस पिला देना चाहिये क्योंकि इससे उसमें बिमारियों से लड़ने की क्षमता आती है।
- पशु के थनों की सूजन को खत्म करने के लिए 2–3 बार दूध निकालना चाहिये।
- प्रसव के उपरांत कुछ दिनों तक पशु को गेहूं का दलिया या कोई आसानी से पचने वाला एवं नरम खाना देना चाहिये। पशु के खाने में दाने की मात्रा बढ़ा देनी चाहिये ताकि उसे ताकत मिल सके।

दूध निकालने की स्वचालित मशीन फायदे एवं नुकसान

[1]इंदु पांचाल, [1]रूबी सिवाच एवं [2] नेहा चौधरी

[1]डेयरी विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी महाविद्यालय,
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)
[2]एकीकृत मधुमक्खी पालन विकास केंद्र, रामनगर।

आज भारत विश्व मे सबसे ज्यादा दूध उत्पादन करने वाला अग्रणी देश है। भारत में 2015–2016 मे दूध का वार्षिक उत्पादन 155.49 मिलियन टन था जो की अब बढ़कर 2017 मे 160 मिलियन टन हो गया है। इतनी मात्रा में दूध का उत्पादन करने वाला केवल एकमात्र यही एक ऐसा देश है। भारत में करीब सवा सौ करोड़ की आबादी है और इन सवा सौ करोड़ में से करीब सात करोड़ लोग कृषि से जुड़े हैं और इन सात करोड़ परिवारों में प्रत्येक दो ग्रामीण घरों में से एक डेयरी उद्योग से जुड़ा है। इसलिए अंतर्राष्ट्रीय बाजार में भारत का अपना एक विशेष स्थान है।

दूध का कारोबार लाखों ग्रामीण परिवारों के लिए एक आय का स्त्रोत है। इसने भारत मे रोजगार और आय सृजन मे एक महत्वपूर्ण योगदान दिया है। खासकर महिलाओं एवं सीमित जमीन रखने वाले छोटे किसानों के लिए रोजगार के अवसर प्रदान किये हैं। परन्तु डेयरी के क्षेत्र से जुड़े किसानों को अधिक श्रम करना पड़ता है जैसे कि पशुओं से दूध निकालने के लिए अधिक श्रम लगता है और एक समय पर एक किसान केवल एक ही पशु का दूध निकाल सकता है किसानों का अपनी रोजमर्रा के कार्यों की वजह से भी पशुओं की देखरेख के लिए कम समय मिलता है इसलिए किसान दो या तीन पशुओं को रखने मे ही समर्थ है परन्तु आज के युग में किसानों की इस समस्या का समाधान है। किसान स्वचालित मशीन का प्रयोग कर इस समस्या से निजाद पा सकता है। परन्तु स्वचालित मशीन को खरीदने से पहले किसान को इसकी विस्तृत जानकारी होनी चाहिए उसे इसके फायदे एवं नुकसान दोनों का ही पता होना चाहिए।

क्या है स्वचालित मशीन ?

ऐसी मशीन जिसका उपयोग कर दुधारू पशुओं से बिना किसी श्रम के दूध निकाला जाता है उसे स्वचालित मशीन कहते हैं। 1990 की शुरूआत से ही यह वाणिज्यिक रूप से उपलब्ध है यह एक ऐसा सिस्टम है जो दुग्ध प्रक्रिया के पूर्ण स्वचालन की अनुमति देता है इसलिए इसे कृषि रोबोट भी कहा जाता है। इसका तीसरा नाम स्वचालित मिल्किंग सिस्टम भी है (ए.एम.एस.) इसमें कुल चार इकाइयां होती हैं।

1. दुग्ध इकाई में दुग्ध मशीन,
2. एक सेंसर (आमतौर पर लेजर),
3. स्वतः एक रोबोट हाथ (टीट–कप जोड़ने और हटाने के लिए) तथा
4. गायों की भीड़ को नियंत्रित करने के लिए एक गेट सिस्टम शामिल है।

ए.एम.एस. सिस्टम को दो तरह से विभाजित किया जाता है एकल स्टाल और बहु स्टाल। एकल स्टाल मे रोबोट और दुग्ध प्रणाली एकीकृत होती है जबकि बहु स्टाल प्रणाली मे रोबोट एक तरह से परिवहन यन्त्र है जो मिल्किंग स्टाल में इधर उधर घूम सकता है। ए.एम.एस. सिस्टम में गायों को स्थायी तोर पर खुले वातावरण में रखा जाता है जहाँ पर वे अपना ज्यादातर समय खाने और आराम में बिताते हैं। गायों को दुग्ध इकाई में तभी प्रवेश मिलता है जब पशु से दूध निकालना हो अगर गायें दुग्ध इकाई में प्रवेश करने का चुनाव करती हैं तो आई.डी. सेंसर द्वारा गाय की पहचान की जाती है यदि गाय ने हाल ही में दूध दिया है तो स्वतः गेट की माध्यम से गाय को यूनिट से बहार भेज देते हैं। अगर गाय दूध दे सकती है तो स्वचालित मशीन के द्वारा सबसे पहले गाय का स्तन साफ किया जाता है फिर थनों को साफ करने के लिए पानी का स्प्रे करा जाता है और फिर रोबोट हाथ के द्वारा थनों को टीट कप से जोड़ा जाता है और दूध दोहने के बाद टीट कप को रोबोट हाथ के माध्यम से हटाया जाता है। ये सभी कार्य एक रोबोट मैनीपुलेटर करता है और किसान का कार्य या शारीरिक श्रम न के बराबर कर देता है।

किसान केवल गायो के निरीक्षण के लिए उपस्थित होता है। ए.एम.एस. सिस्टम की क्षमता 50–70 प्रति गायों की है दिन में 2 से 3 बार दूध आवर्तियों की अनुमति देता है इसलिए गायों को सँभालने वाला एक दुग्ध इकाई प्रति दिन 3 बार प्रत्येक गाय को दूध देने मे 6–7 गायों प्रति घंटे की क्षमता रखता है। ए.एम.एस. इकाई व्यवसायक रूप से उपलब्ध है और स्वैछिक दुग्ध पद्धति को लागू करने में अपेक्षाकृत सफल साबित हुई है।

परम्परागत विधि एवं ए.एम.एस. में अंतर :

- परम्परागत विधि से एक बार में एक ही गाय से दूध निकाला जाता है जबकि ए.एम.एस. का उपयोग कर एक से अधिक गायों से दूध निकाल सकते हैं।
- परम्परागत विधि से समय की कमी के कारण किसान निश्चित समय पर ही दूध निकालता है उसी के विपरीत ए.एम.एस. से 24 घंटे में किसी भी समय दूध निकाल सकता है।
- गायें अपनी इच्छा अनुसार ए.एम.एस. डेरी आवास में आ सकती है किसान को उसे देखने की आवश्यकता नहीं जैसे कि कुछ गायें रात के समय में ही दूध देती हैं ऐसे ए.एम.एस. से जुड़ा सेंसर गाय की देखभाल करता है साथ में पशु स्वस्थ्य एवं दूध की गुणवत्ता को किसान को सूचित करता है।
- अगर पशु के चार थनों की बजाय एक ही थन से दूध आ रहा है तो ए.एम.एस. बाकी थनों से टीट कप को दूध के प्रवाह के आधार पर हटा दिया जाता है जिससे पशु को कोई परेशानी नहीं होती।
- ए.एम.एस. किसान को डेरी फार्म में अपनी गतिविधियों को बढ़ाने की अनुमति देता है दरअसल उचित दुग्ध मशीनरी से पशुओं के झुंड का संचालन तेजी से कर सकते हैं और इससे दूध की गुणवत्ता भी सुनिश्चित होती है। किसानों को परम्परागत साधनों की तुलना अधिक मवेशियों को रखने की अनुमति मिलती है।

ए.एम.एस. के नुकसान

- किसान और पशुओं के बीच में संपर्क कम होता है और एक प्रभावी पशुपालन के लिए किसान को झुंड की स्थिति से पूरी तरह अवगत होना आवश्यक है।
- परम्परागत विधि में गायों से दूध निकालने से पहले गाय के स्वास्थ्य की जांच की जाती है परन्तु ए.एम.एस. की वजह से गाय और किसान का संपर्क नहीं हो पाता जिसकी वजह से गाय अधिक समय तक बीमार रहने के कारण उसके दूध देने की क्षमता और स्वस्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है।
- ए.एम.एस. से दूध निकालने वाले पशुओं की तुलना में परम्परागत तरीके से दूध निकालने वाले पशुओं में एससीसी और पीएलसी की मात्रा क्रमशः कम पायी जाती है, एससीसी और पीएलसी दूध मे श्वेत रक्त कोशिकाओं के माप और दूध में मौजूद बैक्टीरिया की कुल संख्या की मात्रा को दर्शाता है। मौजूद बैक्टीरिया की अधिक मात्रा अच्छी साफ सफाई न होने को दर्शाता है इससे भी दूध की गुणवत्ता पर असर पड़ता है।
- ए.एम.एस. मशीन अधिक महँगी होने के कारण किसानों को इसको खरीद पाना मुश्किल है छोटे किसानों के लिए यह उपकरण अधिक फायदेमंद नहीं है परन्तु ज्यादा पशु रखने वालो किसानों के लिए यह उपयोगी एवं लाभप्रद है।
- ए.एम.एस. पूरी तरह से बिजली से चलाया जाता है जिससे किसानों का खर्चा बढ़ता है।
- ए.एम.एस. की जटिल तकनीकी होने के कारण किसान को शुरूआत मे थोड़ी परेशानी होती है परन्तु एक बार इसे पूरी तरह से अवगत होने के बाद इसको चलाने में कोई परेशानी नहीं होती।

930-000-0857

whatsapp

लुवास पशुपालक हेल्पलाइन नम्बर

पशुओं में हीटस्ट्रोक–लक्षण, उपचार व बचाव

विकास जागलान[1], मनीषा पूनिया[2] एवं गौरव चराया[2]

[1]पशु चिकित्सक पशुपालन एवं डेयरी विभाग, हरियाणा, [2]पशु औषधि विज्ञान विभाग

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)।

तापघात हीटस्ट्रोक को उष्माघात भी कहा जाता है। यह ऐसी अवस्था है जिसमें पीड़ित पशु का तापमान अत्याधिक धूप या गर्मी की वजह से बढ़ने लगता है। हीटस्ट्रोक की स्थिति में पशु के शरीर का प्राकृतिक कुलिंग सिस्टम सुचारू रूप से काम बंद कर देता है जिसकी वजह से पशु का तापमान कम नहीं होने पाता जिसके परिणाम स्वरूप तापमान बढ़ता जाता है और अगर इस तापमान को बाहरी मदद देकर या घरेलू उपचार या पशु चिकित्सक की सहायता से कम नहीं किया गया तो बहुत ही भयावह स्थिति उत्पन्न हो सकती है औरपीड़ित पशु की जान भी जान सकती है।

हीटस्ट्रोक के कारण–

1. हीटस्ट्रोक अत्याधिक गर्मी या तेज धूप के संपर्क में आने के कारण होता है, जिसके परिणाम स्वरूप शरीर का तापमान असामान्य रूप से बढ़ने लगता है।
2. जलाभाव भी इस स्थिति का एक कारण है।
3. हाइपोथेलमस का आघात।

हीटस्ट्रोक के लक्षण–

1. पशु सुस्त हो जाता है।
2. पशु के शरीर का तापमान 106 डिग्री से 110 डिग्री फार्नहाइट तक पहुँच जाता है।
3. पशु को पसीना आना बंद हो जाता है।
4. पशु खाना–पीना छोड़ देता है।
5. पशु के हृदय की धड़कन तेज हो जाती है।
6. पशु की श्वास गति तेज हो जाती है और पशु मुँह खोलकर और जीभ बाहर निकालकर सांस लेने लगता है।
7. आँख की श्लेष्मा झिल्ली लाल हो जाती है।
8. दुधारू पशु का दूध उत्पादन कम हो जाता है।

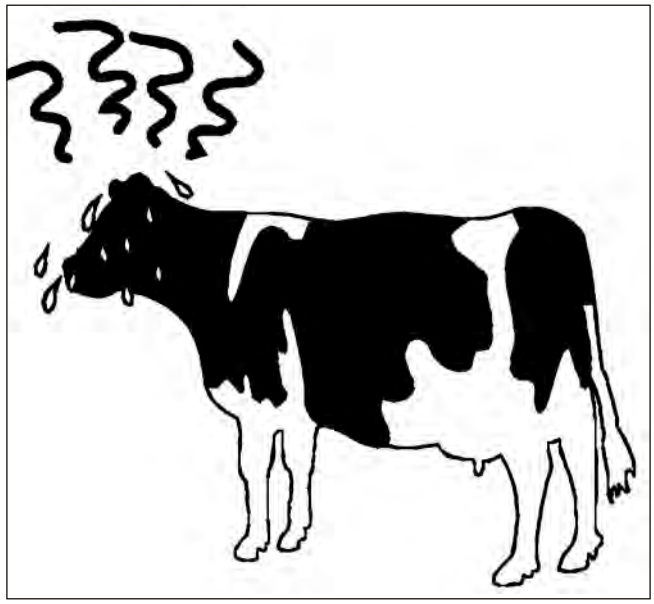

9. अंत में पशु मूर्छित और शक्तिहीन–सा हो जाता है।

पशुओं में हीटस्ट्रोक का प्राथमिक उपचार

1. सर्वप्रथम शरीर के तापमान का नियंत्रित करने के लिए पशु को छायादार, हवादार व ठंडे स्थान पर रखना चाहिए।
2. हीटस्ट्रोक के उपचार के लिए मुख्य लक्ष्य शरीर के तापमान को कम करना है और इसके लिए शीतल जल से स्नान कराएं, माथे पर बर्फ रखें तथा सूती कपड़े की ठंडे पानी में भीगी हुई पट्टी लगाएं।
3. पशु को पानी से भरे गड्डे में रखना चाहिए अथवा पूरे शरीर पर ठंडे पानी का छिड़काव करना चाहिए। संभव हो तो बर्फ अल्कोहल पशुओं के शरीर पर रगड़ना चाहिए।
4. ठंडे पानी में तैयार किया हुआ चीनी, भुने हुए जौ का आटा व थोड़ा नमक का घोल बराबर पिलाते रहना चाहिए।
5. पशु को पुदीना व प्याज का अर्क बनाकर देना

चाहिए।

6. शरीर के तापमान को कम करने वाली औषधि का प्रयोग करना चाहिए।
7. शरीर में पानी एवं लवणों की कमी को पूरा करने के लिए इलेक्ट्रो लाइट थैरेपी देनी चाहिए।
8. प्राथमिक उपचार के बाद नजदीकी पशु चिकित्सालय से संपर्क कर पशु चिकित्सक को बुलाकर पूरा उपचार कराएं।

हीटस्ट्रोक से बचाव के तरीके–

1. गर्मियों के मौसम में पशु को दिन में 3–4 बार ठंडा पानी पिलाएं।
2. पशुओं का बाड़ा हवादार और खुला होना चाहिए ताकि पशुओं को पर्याप्त हवा व बैठने के लिए स्थान मिल जाये।
3. बाड़े के आस–पास छायादार पेड़ होने चाहिए ताकि बाड़ा ठंडा रहे।
4. पशुशाला में कूलर या पंखे की व्यवस्था होनी चाहिए।
5. भैंसों को सुबह शाम ठंडे पानी से नहलाना चाहिए।
6. ज्यादा गर्मी के दिन पशुओं को पानी में नमक और चीनी मिलाकर देनी चाहिए, इससे पशु को राहत मिलेगी और गर्मी लगने का डर नहीं रहेगा।

विस्तार शिक्षा की विभिन्न गतिविधियों (ट्रेनिंग आदि) के लिए पशु विज्ञान केन्द्र

क्र.सं.	पशु विज्ञान केन्द्र	वैज्ञानिक का नाम
1.	पशु विज्ञान केन्द्र, फ्रैन्डस कॉलोनी, नजदीक करनाल बाई पास चौक, कैथल	डॉ. रमेश कुमार
2.	पशु विज्ञान केन्द्र, वैटेनरी पोली क्लीनिक, सोनीपत	डॉ. इन्द्रजीत सिंह
3.	पशु विज्ञान केन्द्र, पांडु पिंडारा, जींद	डॉ. रमेश कुमार
4.	पशु विज्ञान केन्द्र, सिरसा	डॉ. बी.एस. श्योकन्द
5.	पशु विज्ञान केन्द्र, भिवानी	डॉ. धर्मवीर सिंह दहिया
6.	पशु विज्ञान केन्द्र, रोहतक	डॉ. राजेन्द्र सिंह
7.	पशु विज्ञान केन्द्र, युगल विहार (दाहलीवास) रेवाड़ी	डॉ. अभय सिंह यादव
8.	पशु विज्ञान केन्द्र, नजदीक मिनी सैक्ट्रेट, गुड़गांव	डॉ. कृष्ण कुमार यादव
9.	विस्तार शिक्षा निदेशालय, लुवास, हिसार	डॉ. सज्जन सिंह एवं डॉ. देवेन्द्र सिंह
10.	पशु विज्ञान केन्द्र, अम्बाला	–

पशुओं में मद जांचने के सरल तरीके

करन शर्मा, अमन प्रकाश ढाका एवं शिवनगौड़ा पाटिल

मादा पशु एवं प्रसूति रोग विभाग

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)।

जो पशु गर्मी में होते हैं उन्हें समय रहते जांच कर कृत्रिम गर्भाधान या प्राकृतिक गर्भाधान से गाभिन करना डेयरी व्यवसाय में बहुत महत्वपूर्ण एवं एक जटिल कार्य है। बढ़ती जनसंख्या की सबसे बड़ी जरूरत को पूरा करने का भार हमारे देश के पशु पालकों पर है। लेकिन यह एक दुःख का विषय है कि पशु–पालन का व्यवसाय अब ज्यादातर बड़े डेरी फार्मों के नियंत्रण में हैं जबकि लघु किसान अभी भी नयी तकनीकों के अभाव में पशुपालन को एक लाभदायक व्यवसाय के रूप में परिवर्तित नहीं कर पा रहा है।

हर किसान का लक्ष्य होता हैं कि उसका पशु सही समय पर गाभिन हो ताकि उसे हर समय पशु से एक बछड़ा प्राप्त हो ताकि पशु की शारीरिक प्रक्रिया सही चलती रहे और दूध में उत्पत्ति हो। डेरी व्यवसाय की सफलता इस चीज पर निर्भर करती है कि पशुओं में मद की जांच किस समय की गयी हैं। कई बार देखा गया है कि पशु आधी रात में गर्मी में आते हैं और पशु पालक सही समय में पशुओं की मद की अवस्था को नहीं देख पाते जिस वजह से उनके पशु समय पर गर्भधारण करने से वंचित रह जाते हैं।

विभिन्न पशु चिकित्सा शिविर में देखा गया है कि गाय के मुकाबले भैंसों में अशांत मद की शिकायत अधिक हैं क्योंकि इनमें मद के दौरान होने वाली क्रियाएं कम होती है। इस खामी का कारण होता है इस्ट्रोजन जोकि एक हार्मोन होता है जो मादा पशुओं में मद के लक्षणों का सूत्रधार होता है। ऐसे पशु जिनमें इस्ट्रोजन की कमी होती है वे मद के लक्षणों को नहीं दिखा पाते जिसे वजह से उनकी मद चक्र प्रभावित होती है और पशु पालक को अगली मद चक्र का इंतजार करना पड़ता है। इस वजह से उस पशु का ब्यांत अंतराल बढ़ जाता है और दूध उत्पादन में गिरावट आती है। इससे बचने के लिए पशु चिकित्सों ने मद को जांचने के कुछ सरल उपाय निजात किये हैं जिससे किसान अपने पशु को मद के सही समय पर कृत्रिम गर्भाधान व प्राकृतिक गर्भाधान की सहायता से गाभिन कर सके। इन तरीकों का इस्तेमाल करके किसान अपने डेयरी व्यवसाय को सुचारू रूप से चला सकते हैं और आय में वृद्धि कर सकते हैं।

मद में आये हुए पशुओं को जांचने के कुछ उपाय–

1. ***मद के लक्षणों को पहचानना*** – जो पशु मद की अवस्था में होते हैं वे दूसरे पशुओं के मुकाबले ज्यादा बेचैन और उग्र रहते हैं। दूसरे पशुओं पर चढ़ाई करना व स्वयं पर इस बर्ताव का होने देना मद का सबसे महत्वपूर्ण लक्षण हैं। कुछ पशुओं में इस्ट्रोजन, खनिज लवणों व संतुलित आहार की कमी के कारण ये लक्षण नहीं आ पाते।

2. ***पूँछ पे पेंट लगा देना*** – यह उपाय बड़े पशु फार्मों पर कारगर हैं जहाँ मादा भैंसों के साथ में एक या दो बधिया भैंसों को रखा जाता हैं। ये बधिया भैंसे मादा को गाभिन नहीं कर सकते लेकिन योनी स्त्राव को महसूस करके मद की अवस्था वाले पशुओं पर चढ़ाई कर देते हैं। जिन मादा पशुओं की पूँछ से पेंट उतरा हुआ पाया जाये उनको और पशुओं से अलग किया जाता है। पेट के उतरने से पशुओं की मद की अवस्था का ज्ञात होता है।

3. ***दबाव यंत्र का प्रयोग*** – यह यंत्र मादा पशुओं की पीठ के पिछले छोर पर लगाया जाता है। इस यंत्र के भैंस के मुकाबले गायों में सफल परिणाम पाए गये हैं क्योंकि मादा भैंसों में झोड़ में नहाने की समस्या पाई जाती है, जिस वजह से यंत्र खराब होने का खतरा रहता है।

4. ***बधिया भैसों के ठोड़ी के नीचे ''चीन बॉल'' नामक यंत्र का लगाना*** – यह यंत्र भैंसों की ठोड़ी के नीचे लगाया जाता हैं। जैसे ही वे मद अवस्था वाली मादा भैंस पर चढ़ाई करते हैं दबाव के कारण गेंद के अन्दर की डाई मादा की पीठ पर लग जाती हैं और जो मादा मद अवस्था में

हो उसका ज्ञात हो जाता हैं।

5. ग्रीवा स्त्राव की पशु चिकित्सालय की प्रयोगशाला में जांच – यह पशु चिकित्सकों द्वारा अद्भुत उपलब्धि हैं। यह सबसे सरल उपाय हैं। जो पशु किसी तंत्रिका विकार या माँसपेशियों में दर्द की वजह से खड़े नहीं हो पाते उनमें मद ज्ञात करने का यह इकलौता उपाय हैं। इसमें ग्रीवा स्त्राव की प्रयोगशाला में जाँच होती हैं और उससे मद की अवस्था का पता लगाया जाता है।

6. सी.सी.टी.वी. कैमरे का प्रयोग करके – इस विकल्प का इस्तेमाल बड़े फार्मों पर हो रहा है। इन कैमरों की मदद से हम पशुओं की हर छोटी बड़ी हलचल पर नजर रख सकते हैं। जो पशु रात में मद के लक्षण दिखाते हैं उनको इन कैमरों के जरिये देखा जा सकता हैं और समय रहते उन्हें मध्य मद में गर्भधारण करवाया जा सकता है।

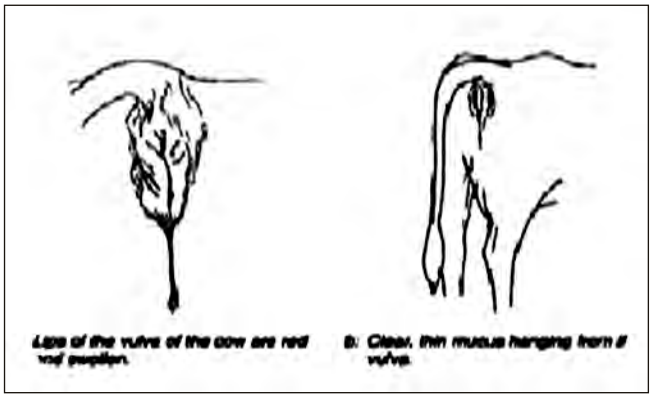

ग्रीवा श्राव की लैब में जाँच करवाएं

मादा पशु की पूँछ पर पेंट लगवाये

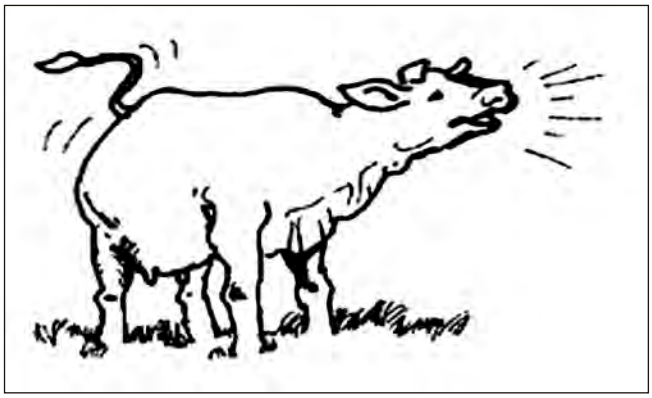

मद के लक्षणों को पहचानने

नर पशु के ठोडी के नीचे चीन बॉल नामक यंत्र लगवाये

पशु फार्म पर सी.सी. टी.वी. का प्रयोग करें

पशु प्रजनन में खनिज लवणों की महत्वता

[1]अमन प्रकाश ढाका, [2]विनय कुमार एवं [1]करन शर्मा

[1]मादा पशु एवं प्रसूति रोग विभाग, [2]पशु जैव प्रौद्योगिकी विभाग

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)।

खनिज लवणों का भोजन में होना न केवल मनुष्यों बल्कि पशुओं के लिए भी अत्यंत आवश्यक हैं। हालांकि खनिज लवण भोजन में बहुत कम मात्रा में उपस्थित होते हैं परन्तु अति उपयोगी होते हैं। खनिज लवणों की कमी से पशु के शरीर में विभिन्न प्रकार के रोग होते हैं जिनसे इनके दूध उत्पादन पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता हैं, पर इससे भी ज्यादा पशु की प्रजनन क्षमता पर बुरा प्रभाव पड़ता हैं।

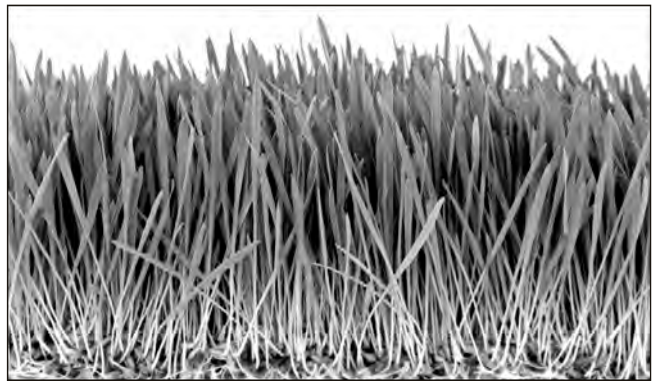

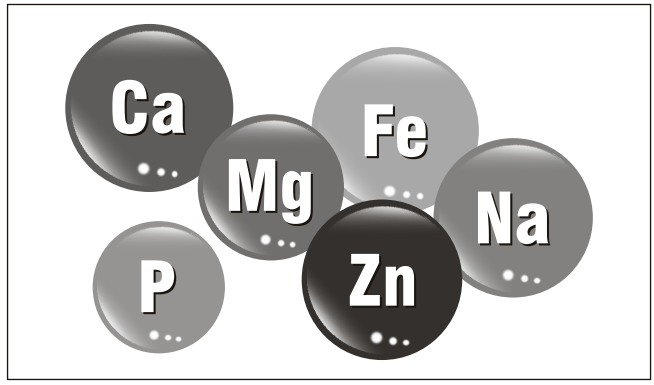

खनिज लवणों की कमी से होने वाले विभिन्न प्रजनन सम्बन्धी रोग –

- खनिज लवणों की कमी से अंडाशय पर अंड पुटिकाओं का निर्माण कम हो जाता हैं जिससे पशु मद में आना बंद कर देता है।
- खनिज लवणों की कमी से पशुओं में अशांत मद अथवा मद अवस्था मद अवस्था में होते हुए भी लक्षण नहीं दिखाना जैसे लक्षण दिखाई देते हैं।
- खनिज लवणों जैसे कैल्शियम, सेलेनियम आदि की कमी से पशुओं में जेर का न गिरना जैसी समस्या दिखाई देती हैं।
- खनिज लवणों की कमी से गर्भाशय में संकुचन प्रभावी तरीके से नहीं होने के कारण प्रसव सुचारू रूप से नहीं हो पाता हैं। जिससे पशु कठिन प्रसव में चला जाता है।
- खनिज लवणों की कमी से गर्भाशय प्रसव उपरांत बहुत देर से प्रसव पूर्व अवस्था में आ जाता है (सामान्यतः 30 दिन) जिससे विभिन्न गर्भाशय सम्बन्धी रोग हो जाते हैं।
- कुछ विशेष खनिज लवण जैसे कैल्शियम, सेलेनियम, फॉस्फोरस आदि की कमी से मांसपेशियों की काम करने की क्षमता कम हो जाती हैं जिससे फूल दिखाना जैसी समस्या दिखाई देती हैं। यह ज्यादातर उम्रदराज पशुओं में दिखाई देती हैं।
- खनिज लवणों की कमी से विभिन्न उपापचय संबंधित रोग जैसे मिल्क फीवर, पी.पी.एच. आदि हो जाते हैं। ऐसे पशु की भविष्य में प्रजनन क्षमता पर बुरा असर पड़ता है।
- खनिज लवणों की कमी से नर पशुओं में कामेच्छा कम होना व वीर्य का उत्पादन कम होना जैसे लक्षण दिखाई देते हैं।
- इसके अलावा खनिज लवणों की कमी से मादा पशुओं में निषेचन नहीं हो पाता तथा भ्रूण की प्रारंभिक अवस्थाओं में मृत्यु, कमजोर नवजात का होना,

गर्भपात का होना आदि जैसे लक्षण भी पाए जाते हैं।

- भेड़ों में जिंक की कमी से विकृत एवं सूखे हुए भ्रूण का पैदा होना जैसे समस्याएं देखी गयी हैं।

लवणों की कमी की समस्या से निजात पाने के कुछ सरल उपाय –

- पशुओं में मद मे न आने पर पशुओं को 50–50 ग्राम खनिज लवण दिन में दो बार 1 महीने तक खिलाये।
- जेर की समस्या से निजात पाने के लिए पशु को गर्भाशय के अंतिम दिनों में विटामिन–ई व सेलेनियम का टीका 5 मी.ली. पुट्ठे पर लगवाये।
- जिन पशुओं में अशांत मद की समस्या मुख्य रूप से ज्यादा हो उनका समय रहते खून की जांच करवाए ताकि शरीर में लवणों की मात्रा का ज्ञात हो सके और ऐसे पशुओं का पूर्ण रूप से ध्यान रखे।
- जो पशु गर्मी के दिनों में मद में ना आते हो उनके लिए थान में कूलर या पंखा लगवाये ताकि पशु के शरीर का तापमान सही बना रहे और शारीरिक उपाचय सही बनी रहे।
- गर्मी के दिनों में पशु को साफ पानी की कमी न होने दे। पानी की कमी से दिमाग से निकलने वाले पशु प्रजनन हार्मोन का स्त्राव कम हो जाता हैं जिसके कारण खून गाड़ा हो जाता हैं और रक्तचाप कम होने से अन्य समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं।
- पशुओं को संतुलित आहार दे जिससे वे अधिक गर्मी व अधिक सर्दी से होने वाले तनाव को सहन कर सके और उनकी प्रजनन प्रणाली सही बनी रहे।

विस्तार शिक्षा की विभिन्न गतिविधियों (ट्रेनिंग आदि) के लिए पशु विज्ञान केन्द्र

क्र.सं.	पशु विज्ञान केन्द्र	वैज्ञानिक का नाम
1.	पशु विज्ञान केन्द्र, फ्रैन्डस कॉलोनी, नजदीक करनाल बाई पास चौक, कैथल	डॉ. रमेश कुमार
2.	पशु विज्ञान केन्द्र, वैटेनरी पोली क्लीनिक, सोनीपत	डॉ. इन्द्रजीत सिंह
3.	पशु विज्ञान केन्द्र, पांडु पिंडारा, जींद	डॉ. रमेश कुमार
4.	पशु विज्ञान केन्द्र, सिरसा	डॉ. बी.एस. श्योकन्द
5.	पशु विज्ञान केन्द्र, भिवानी	डॉ. धर्मवीर सिंह दहिया
6.	पशु विज्ञान केन्द्र, रोहतक	डॉ. राजेन्द्र सिंह
7.	पशु विज्ञान केन्द्र, युगल विहार (दाहलीवास) रेवाड़ी	डॉ. अभय सिंह यादव
8.	पशु विज्ञान केन्द्र, नजदीक मिनी सैक्ट्रेट, गुड़गांव	डॉ. कृष्ण कुमार यादव
9.	विस्तार शिक्षा निदेशालय, लुवास, हिसार	डॉ. सज्जन सिंह एवं डॉ. देवेन्द्र सिंह
10.	पशु विज्ञान केन्द्र, अम्बाला	–

गाय भैंस में रेबीज – एक घातक रोग

[1]वंदना भनोट, [2]अनीता गांगुली व [2]रणबीर सिंह बिसला

[1]पशु रोग निदान प्रयोगशाला, अम्बाला

[2]क्षेत्रिय पशु रोग निदान एवं विस्तार केन्द्र, करनाल

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार।

रेबीज एक वायरल रोग है जो स्तनधारियों को प्रभावित करता है। अक्सर यह जंगली जानवरों को प्रभावित करता है परन्तु मनुष्य व घरेलु पशु (पशुधन) भी जोखिम पर हैं। यह एक जूनोटिक रोग है जो पशु से मनुष्य व मनुष्य से पशुओं में फैलता है। इसमें रोगी के व्यवहार में बदलाव अधिक उत्तेजना, पागलपन, पक्षघात व मौत हो जाती है। यह विषाणु मनुष्यों और पशुओं के मस्तिष्क और रीढ़ की हड्डी सहित केन्द्रीय तंत्र को प्रभावित करता है। ऊष्मायन अवधि के दौरान, विषाणु नसों से मस्तिष्क तक पहुँचता है। इस प्रक्रिया में औसतन एक से तीन माह लगते हैं परन्तु कभी–कभी कुछ दिन व कुछ साल भी लग जाते हैं। रेबीज विषाणु दो रूप में प्रभावित करता है। उगर व लकवा ग्रस्त (गूंगा) रूप है।

मनुष्य में इसे हाइड्रोफोबिया या जलटांका कहते हैं क्योंकि इस रोग में गले की मांसपेशियों में ऐठन से रोगी पानी नहीं पी पाता है। रेबीज कुछ देशों को छोड़कर दुनिया के सभी भागों में पाया जाता है। सख्त नियमों तथा रोकथाम के प्रभावशाली उपायों के कारण आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, डेनमार्क, ब्रिटेन जैसे देशों में रेबीज का नामों निशान नहीं है। भारत में रेबीज का एक विकराल रूप है।

कारक : रेबीज वायरस रेबडो वायरस, जीनस लिस्सा वायरस से संबंधित है। इसका आकार पिस्तौल की गोली की तरह होता है। इसकी लम्बाई लगभग 180 नैनो मीटर ओर व्यास 75 नैनो मीटर होता है। यह विषाणु स्नायुतंत्र की कोशिकाओं में अपनी वृद्धि करते हैं।

गर्म खून वाले पशु इस विषाणु के लिए ग्रहणक्षम है। ग्रहणक्षमता सभी जातियों में अलग है। पशु जैसे कुत्ता, लोमड़ी, भेड़िया, सियार, नेवला इस रोग के अत्याधिक ग्रहणक्षम है व विषाणु के वाहक है। घरेलु पशु जैसे गाय, भैंस, भेड़–बकरी, सुअर आदि भी रोग से ग्रसित होते हैं। यह विषाणु नर्वस टिश्यु, सेलिवरी ग्लेंड से लाइवा में पाए जाते हैं। बहुत कम बार यह लिम्फ, दूध व मूत्र में पाया जाता है।

रेबीज का प्रसार : रेबीज ग्रसित पशु के काटने से अधिकतर यह रोग फैलता है। मुख्यता रेबीज से ग्रसित कुत्ते, बिल्ली तथा जंगली पशुओं जैसे कि लोमड़ी, भेड़िया, गीदड़ आदि द्वारा काटे जाने पर विषाणु का प्रसार होता है। लार विषाणु के संचरण का प्रमुख स्त्रोत है क्योंकि यह विषाणु ग्रसित पशु द्वारा लार के माध्यम से गिरता है, विषाणु का छिद्र ओर त्वचा में खरोंच के माध्यम से शरीर में प्रवेश संभव है यह तथापि असमान्य है। खुले घाव, श्लेष्मा, झिल्ली, आंखें और मुँह विषाणु के लिए संभव प्रवेश द्वार हैं। सामान्य परिस्थितियों के अन्तर्गत विषाणु हवा के माध्यम से नहीं फैलता है।

रोग जनन : रेबीज विषाणु कटी या छिली हुई त्वचा के द्वारा शरीर में प्रवेश करता है ओर शुरूआत में स्थानीय ऊतक ओर मांसपेशियों में अपनी वृद्धि करता है। इसके पश्चात विषाणु स्नायुतंत्र में प्रवेश कर जाता है जो रोग के बढ़ने में भूमिका निभाता है। यह विषाणु स्पाइनल कोर्ड के जरिये मस्तिष्क में पहुँचता है। विषाणु मस्तिष्क में पहुँचने पर कई भागों को नुकसान पहुँचता है। इससे तंत्रिका कोशिकाएँ उत्तेजित होने से पशु उग्र हो जाता है। तंत्रिका कोशिकाओं के अधःपतन से कई मांसपेशियों का पक्षाघात हो जाता है। इस तरह गले की मांसपेशियों के पक्षाघात से पशु आहार व पानी नहीं निगल पाता। अगर स्वास प्रक्रिया से सम्बन्धित मांसपेशियों का पक्षाघात होता है तो पशु को साँस लेने में तकलीफ होती है व पशु की मौत हो जाती है।

विषाणु के शरीर में प्रवेश करने के बाद लक्षण आरम्भ

होने के अंतराल कई बातों पर निर्भर करता है। शरीर पर काटे गए जख्म की मस्तिष्क से दूरी, जख्म का आकार व प्रकार, घाव में प्रवेशित विषाणुओं की संख्या, जख्म में जाने वाली लार की मात्रा आदि के अनुसार बीमारी के लक्षण बहुत जल्दी या देर से आते हैं। इसे ऊष्मान्य अवधि कहते हैं। यदि जख्म मस्तिष्क के पास किसी अंग जैसे चेहरे, गर्दन आदि पर हो या जीन अंगों में स्नायु तंत्रिकाएं अधिक हो तो रोग बहुत शीघ्र हो जाता है। इसके विपरीत यदि कुत्ता टांग आदि पर काटता है तो बीमारी कुछ देरी से होती है। इसी प्रकार यदि घाव गहरा हो या काटने के घाव कई जगह हो तो ऐसी स्थिति में रेबीज रोग अधिक शीघ्र तथा गंभीर रूप में होता है।

लक्षण : गाय/भैंस में रेबीज के निम्न लक्षण हैं :–

1. पशु अस्थिर अवस्था में लड़खड़ाया नजर आता है, पशु अन्य पशुओं या दीवार से टकरा जाता है।
2. हल्का तापमान, अस्वस्थता, भूख का कम लगना व दूध उत्पादन में कमी।
3. कान का बार–बार कांपना व हिलना।
4. मुख की मांसपेशियों के पक्षाघात के कारण पशु मुंह खुला रखता है मानो कोई चीज फंसी हो तथा अधिक लार गिराता व दांत पीसता है।
5. पशु को कुछ निगलने व पानी पीने में तकलीफ होती है व बिना आवाज रंभाने की कोशिश करता है।
6. स्वर रज्जू में पक्षाघात के कारण मुंह से कर्कश आवाज निकलती है।
7. पशुओं में यौन इच्छा बढ़ जाती है, बार–बार पेशाब करते हैं, गाय व भैंस गर्मी के लक्षण प्रकट करती है जबकि सांड गाय व भैंस पर चढ़ता है।
8. ये लक्षण 1–3 दिन चलते हैं बाद में जल्दी ही तेज पक्षाघात के कारण कुछ ही घंटों में पशु की मौत हो जाती है।
9. पिछले साल 2015–16 में लुवास के क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र उचानी करनाल में 08 भैसों, 12 गायों और दो भेड़ों में रेबीज जैसे लक्षण देखे गये हैं।

निदान :

1. लक्षण के आधार पर।
2. हिस्टोपैथलोजिकल परीक्षण मस्तिष्क में नेगरी बोडी मजबूत होना।
3. फ्लोरी–सेंट ऐटीबोडी मौजूद टैस्ट।

इलाज :

एक बार यदि रेबीज लक्षण आ जाएँ तो इसका उपचार संभव नहीं है, रोग के लक्षण प्रकट हो जाने पर पशु या मनुष्य की मौत निश्चित है। दवाइयों की सहायता से केवल रोगी पशु में उत्तेजना, दौरे तथा कष्ट को कम किया जा सकता है इसलिए इसकी रोकथाम ही एकमात्र उपाय है।

930-000-0857

whatsapp

लुवास पशुपालक हेल्पलाइन नम्बर

पशुओं में मिश्रित संक्रमण: लक्षण, निदान एवं रोकथाम

अजय गौतम एवं शालिनी शर्मा

पशु चिकित्सा फिजियोलॉजी एवं बायोकेमिस्ट्री विभाग, पशु चिकित्सा विज्ञान महाविद्यालय,
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय हिसार, हरियाणा।

मिश्रित संक्रमण क्या है?

जब एक या एक से अधिक जीवाणु/विषाणु पशुओं के शरीर में हवा अथवा पानी के माध्यम से प्रवेश कर जाते हैं और उनके प्रतिरक्षा तंत्र को प्रभावित करते हैं। मनुष्यों के अतिरिक्त पालतू दुधारू पशु जैसे गाय बकरी भैंस इत्यादि में भी देखने को मिलता है। उदाहरण के तौर पर पी पी आर और मुंहपका–खुरपका रोग, पी पी आर और रिंडरपेस्ट, पी पी आर तथा ओ आर ऍफ वायरस, पी पी आर व ब्लू टंग वायरस का मिश्रित संक्रमण आम तौर पशुओं में पाया जा सकता है। पी पी आर और मुंहपका–खुरपका रोग अफ्रीका व एशिया में सबसे अधिक पाया जाने वाला संक्रमण हैं।

पी पी आर रोग द्वारा बकरियों में मृत्यु दर 10–90 प्रतिशत तक पहुँच जाती है जबकि मुंहपका–खुरपका रोग से जानवर की मृत्यु नहीं होती लेकिन कुछ छोटे व कम उम्र के पशुओं के हृदय की मांसपेशियों में सूजन आ जाने से मृत्यु हो जाती है। सह संक्रमण या मिश्रित संक्रमण से रोगाणुओं के पशुओं के शरीर में लम्बे समय तक रहने की संभावना बढ़ जाती है। ये दोनों ही संक्रामक बीमारियां हैं जिससे पशुपालक को अत्यधिक आर्थिक हानि का सामना करना पड़ता है।

पीपीआर और मुंहपका–खुरपका रोग मिश्रित संक्रमण/सह संक्रमण

लक्षण :

- बुखार आना
- मुख व नाक से पानी आना
- जीभ और मसूड़ों में छाले पड़ना
- मुँह में घावों का होना
- पैर में घाव होने के कारण लंगड़ापन
- दस्त लगना
- श्वास लेने में मुश्किल होना
- मुख से लार टपकना
- दुग्ध उत्पादन में कमी आना
- पशु की मृत्यु

सावधानी :

- प्रभावित पशुओं को साफ एवं हवादार स्थान पर रखें।
- पशुओं में ऐसे लक्षण आने पर तुरंत पशु चिकित्सक को सूचित करें।
- पशु चिकित्सक, पशुओं के नाक व मुख से आने वाले स्त्रावों का नमूना ले कर प्रयोगशाला में जांच कर पी पी आर अथवा मुँहपका–खुरपका या फिर दोनों के मिश्रित संक्रमण की पुष्टि होने पर उचित इलाज प्रारम्भ करते हैं।
- पशुओं के मुख से गिरने वाली लार के संपर्क में आने वाला भूसा या वस्तुओं को जला देना चाहिए।
- पीड़ित बकरियों को अन्य बकरियों/पशुओं से अलग रखना चाहिए।

उपचार :

- मुख के छालों को एक प्रतिशत फिटकरी से दिन में तीन बार धोना चाहिए।
- पशुओं के घाव पर पशु चिकित्सक द्वारा प्रस्तावित उपयुक्त मलहम का प्रयोग करना चाहिए।
- पशु चिकित्सालय में पशुओं को एंटीबायोटिक दवाओं के टीके लगवाने चाहिए।

टीकाकरण से बचाव :

- छह माह से ऊपर के स्वस्थ पशुओं में मुँहपका–खुरपका रोग पी पी आर के जीवाणु के विरुद्ध टीकाकरण करवाना चाहिए।

पशु परिवहन में तनाव व उससे निदान

दिनेश गुलिया[1], प्रवीन कुमार[2] एवं दिपिन चन्द्र यादव[3]

[1]पशु औषधि विज्ञान विभाग, [2]पशु चिकित्सक, पशुपालन विभाग, पंजाब, [3]पशु उत्पादन एवं प्रबंधन विभाग

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

पालतू पशुओं में परिवहन मूल रूप से एक असामान्य और भयसूचक परिस्थिति होती है। यह प्रक्रिया हैंडलिंग एवं कारावास की ऐसी अनिवार्य परिस्थितियों को सम्मिलित करती है जिनके परिणामस्वरूप पशु में तनाव, चोट व यहाँ तक कि पशु की मृत्यु का कारण भी बन सकती है। पशुओं में परिवहन आमतौर पर मालिकाना हक बदलने की प्रक्रिया से मेल खाता है जिसमें पशुहित को दरकिनार किया जाता है। पशु परिवहन के नियम विभिन्न देशों में अलग–अलग है। यात्रा की अवधि, पशुओं की संख्या, पर्यावरण की परिस्थिति आदि बिन्दु इन नियमों का आधार है। हमारे देश में भी पशु परिवहन से संबंधित नियम है जो कि भारतीय मानक ब्यूरो निर्देशित है।

परिवहन के माध्यम :–

- सड़क मार्ग द्वारा
- रेल द्वारा
- पानी के जहाज द्वारा
- वायुयान द्वारा
- पैदल चलाकर

परिवहन की आवश्यकता :–

- पशु मेले में ले जाने के लिए
- प्रतियोगिता में भाग लेने हेतु
- खरीद व बिक्री के दौरान
- इलाज संबंधित
- चारागाह की खोज में

परिवहन में स्वास्थ्य की उपयुक्ता :–

स्वस्थ एवं दुरूस्त पशु को ही परिवहन के लिए चयनित करना चाहिए। इसके लिए अपने नजदीकी पशु चिकित्सक से उचित परामर्श लेकर ही इस प्रक्रिया की शुरूआत करें।

गाभिन, कमजोर, नवजात, लंगड़े इत्यादि पशुओं को परिवहन प्रक्रिया में शामिल ना करें।

परिवहन से पहले तैयारियाँ :–

- पशुओं को हैंडलिंग की विभिन्न प्रक्रिया से अभ्यस्त कराए ताकि तनाव, दर्द एवं चोट की स्थिति से बचाव किया जा सके।
- पशुओं का परिवहन के 2 से 4 घण्टे पहले आहार बंद कर दें।
- परिवहन के वाहन को इस तरह से तैयार करें जिससे पशु संपूर्ण प्रक्रिया में सुरक्षित रहे। इसके लिए बांस की बल्ली, लकड़ी के फट्टे व रस्सी आदि का उपयोग किया जा सकता है। मौसम के आवश्यकता अनुसार उचित प्रबंधन सुनिश्चित करें। वाहन में बिछावन जैसे की पराली, तूड़ी, रेती आदि का उपयोग कर सकते हैं।
- परिवहन के लिए ऐसे मार्ग का चुनाव करें जो उबड़–खाबड़ ना हो, अवरोध कम हो, शोर–शराबा न हो और कम से कम भीड़–भाड़ हो।
- वाहन चालक तेज गति एवं ब्रेकिंग का ध्यान रखे।
- लंबी दूरी की यात्रा के दौरान पशु के खान पान की तयशुदा नियमों के तहत उचित व्यवस्था करें।

उपरोक्त बिन्दुओं को ध्यान में रख कर पशुपालक परिवहन से पशु को होने वाले तनाव को बहुत हद तक कम कर सकते हैं। अन्य किसी जानकारी के लिए अपने नजदीकी पशु चिकित्सक से परामर्श ले।

दुधारू भैंसों की आहार व्यवस्था

सज्जन सिंह[1], दलजीत सिंह[2] एवं राजेन्द्र सिंह श्योकन्द[1]

[1]विस्तार शिक्षा निदेशालय एवं [2]पशु प्रजनन विभाग

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

पशुपालन में हरियाणा प्रान्त का विशेष स्थान है। हरियाणा प्रदेश को विश्वप्रसिद्ध 'मुर्राह' भैंस का जन्म स्थान होने का गौरव भी प्राप्त है। इन दुधारू भैंसों की उत्पादन क्षमता बनाए रखना एक चुनौती है क्योंकि पशु की चारा खाने की एक सीमा होती है। इसी सीमा में रहकर इन पशुओं के लिए आहार योजना बनानी होती है ताकि दूध उत्पादन अनुसार पोषक तत्व उपलब्ध कराए जा सकें। इन बातों को ध्यान में रखकर 600 कि.ग्रा. शरीर भार तथा 6 प्रतिशत वसा वाला दूध देने वाली भैंसों के लिए दूध उत्पादन अनुसार आहार तालिकाएं सुझाई गई हैं।

12–15 कि.ग्रा. दूध उत्पादन के लिए

दूध की मात्रा	चारा / दाना (कि.ग्राम / दिन)	हरे चारे की उपलब्धता अनुसार आहार व्यवस्था			
		I	II	III	IV
12 कि.ग्रा.	बरसीम (80 प्रतिशत नमी)	–	20.0	40.0	–
	जई (80 प्रतिशत नमी)	–	18.0	10.0	–
	दाना मिश्रण (10 प्रतिशत नमी)	7.0	7.0	5.0	7.0
	बरसीम 'हे' (15 प्रतिशत नमी)	5.0	–	–	–
	जई 'हे' (15 प्रतिशत नमी)	4.0	–	–	–
	हरा मक्का / ज्वार (75 प्रतिशत नमी)	–	–	–	50.0
	तूड़ी (10 प्रतिशत नमी)	इच्छानुसार	इच्छानुसार	इच्छानुसार	इच्छानुसार

दाना मिश्रण के घटक (कि.ग्रा. / 100 कि.ग्रा.)

घटक	मात्रा
मक्का / जौ	20
मूंगफली की खल	20
बिनौला खल	20
गेहूँ	17
गेहूँ चोकर	20
खनिज मिश्रण	02
साधारण नमक	01

घटक	मात्रा
गेहूँ	37
चावल चोकर	20
मूंगफली खल	10
बिनौला खल	20
सोयाबीन चूरी	10
खनिज मिश्रण	02
साधारण नमक	01

- 12 कि.ग्रा. से अधिक दूध देने वाली भैंस को प्रति एक कि.ग्राम. अतिरिक्त दूध के लिए 750 ग्राम अतिरिक्त दाना दें।

16–20 कि.ग्रा. दूध उत्पादन के लिए

दूध की मात्रा	चारा / दाना (कि.ग्राम / दिन)	हरे चारे की उपलब्धता अनुसार आहार व्यवस्था			
		I	II	III	IV
16 कि.ग्रा.	बरसीम (80 प्रतिशत नमी)	–	20.0	40.0	–
	जई (80 प्रतिशत नमी)	–	20.0	10.0	–
	दाना मिश्रण (10 प्रतिशत नमी)	9.0	8.0	6.0	9.0
	बरसीम 'हे' (15 प्रतिशत नमी)	5.0	–	–	–
	जई 'हे' (15 प्रतिशत नमी)	4.0	–	–	–
	हरा मक्का / ज्वार (75 प्रतिशत नमी)	–	–	–	50.0
	तूड़ी (10 प्रतिशत नमी)	इच्छानुसार	इच्छानुसार	इच्छानुसार	इच्छानुसार

I हरा चारा उपलब्ध नहीं है।	II बरसीम / जई सीमित मात्रा में उपलब्ध है।	III बरसीम / जई प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है।	IV मक्का / ज्वार प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है।

दाना मिश्रण के घटक (कि.ग्रा. / 100 कि.ग्रा.)

घटक	मात्रा
मक्का / जौ	30
मूंगफली खल	27
बिनौला	15
सोयाबीन चूरी	10
गेहूँ चोकर	15
खनिज मिश्रण	02
साधारण नमक	01
मक्का / जौ	25

घटक	मात्रा
गेहूँ	10
चावल चोकर	20
मूंगफली खल	15
बिनौला खल	15
सोयाबीन चूरी	12
खनिज मिश्रण	02
साधारण नमक	01

- 16 कि.ग्रा. से अधिक दूध देने वाली भैंस को प्रति एक कि.ग्रा. अतिरिक्त दूध के लिए 600 ग्राम अतिरिक्त दाना दें।
- दूध उत्पादन हेतु कैल्शियम की जरूरत पूरी करने के लिए 25–50 ग्राम कैल्साइट पाउडर दाने में मिलाकर खिलायें।

12–25 कि.ग्रा. दूध उत्पादन के लिए

दूध की मात्रा	चारा / दाना (कि.ग्राम / दिन)	हरे चारे की उपलब्धता अनुसार आहार व्यवस्था			
		I	II	III	IV
21 कि.ग्रा.	बरसीम (80 प्रतिशत नमी)	–	20.0	40.0	–
	जई (80 प्रतिशत नमी)	–	20.0	10.0	–
	दाना मिश्रण (10 प्रतिशत नमी)	12.0	11.0	9.0	12.0
	बरसीम 'हे' (15 प्रतिशत नमी)	5.0	–	–	–
	जई 'हे' (15 प्रतिशत नमी)	3.0	–	–	–
	हरा मक्का / ज्वार (75 प्रतिशत नमी)	–	–	–	50.0
	तूड़ी (10 प्रतिशत नमी)	इच्छानुसार	इच्छानुसार	इच्छानुसार	इच्छानुसार

I हरा चारा उपलब्ध नहीं है।	II बरसीम / जई सीमित मात्रा में उपलब्ध है।	III बरसीम / जई प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है।	IV मक्का / ज्वार प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है।

दाना मिश्रण के घटक (कि.ग्रा. / 100 कि.ग्रा.)

घटक	मात्रा
मक्का / जौ	35
मूंगफली की खल	17
बिनौला खल	20
गेहूँ	15
गेहूँ चोकर	10
खनिज मिश्रण	02
साधारण नमक	01

घटक	मात्रा
गेहूँ	20
चावल चोकर	15
मूंगफली खल	32
बिनौला खल	22
सोयाबीन चूरी	08
खनिज मिश्रण	02
साधारण नमक	01

- 21 कि.ग्रा. से अधिक दूध देने वाली भैंस को प्रति एक कि.ग्रा. अतिरिक्त दूध के लिए 500 ग्राम अतिरिक्त दाना दें।
- दूध उत्पादन हेतु कैल्शियम की जरूरत पूरी करने के लिए 50–100 कि.ग्रा. कैल्साइट पाउडर दाने में मिलाकर खिलायें।
- 20 कि.ग्रा. से अधिक दूध देने वाली भैंसों की पाचन क्रिया को सुचारू रूप से चलाने के लिए 80–100 ग्रा. मीठा सोडा दें।

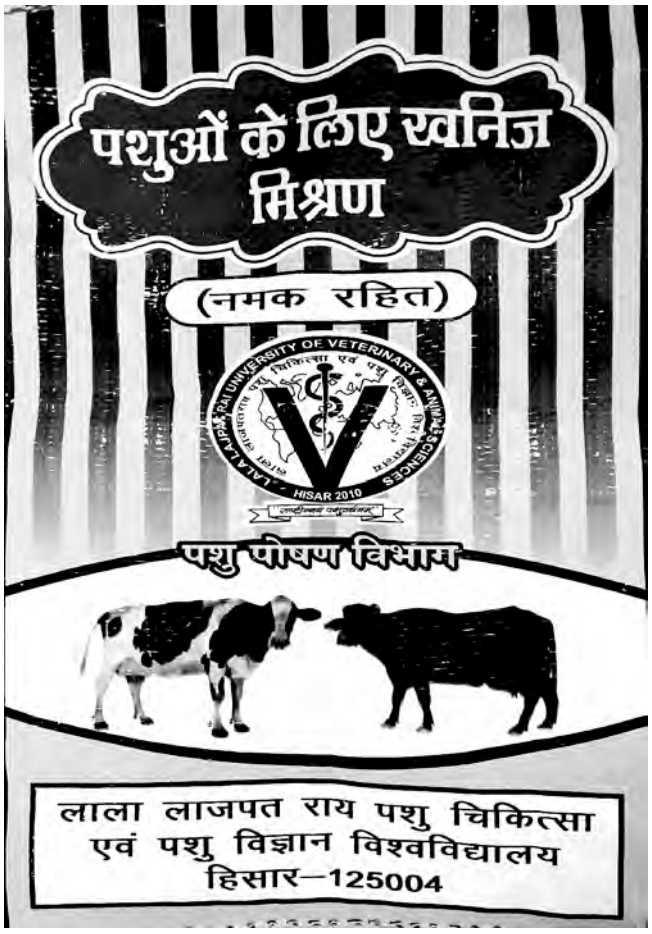

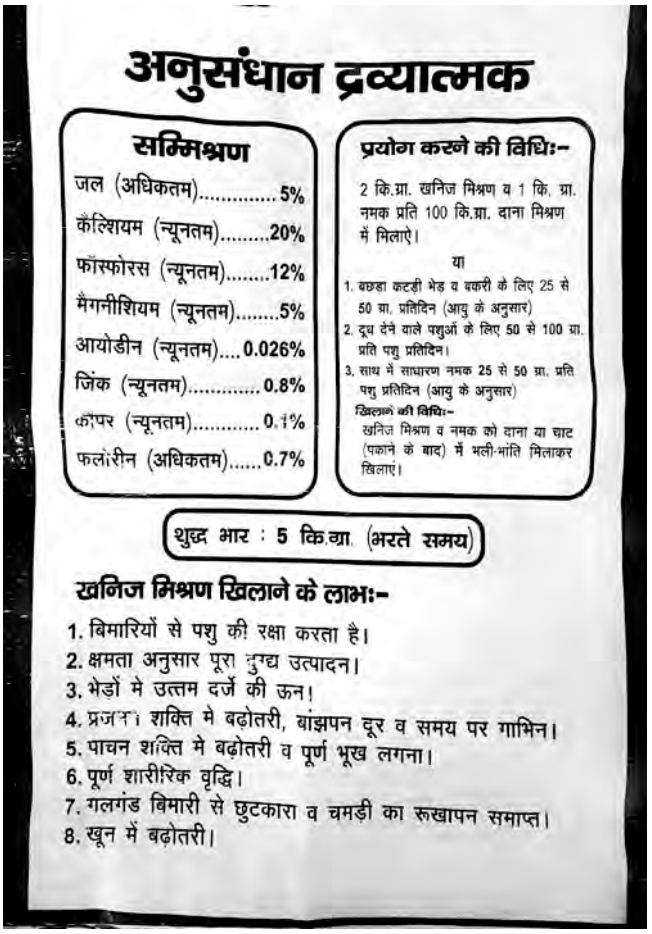

कुक्कुट आहार बनाना, खिलाना और सम्भाल

धर्मवीर सिंह दहिया, रमेश कुमार एवं देवेन्द्र सिंह

विस्तार शिक्षा निदेशालय लुवास, हिसार

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

सन्तुलित आहारः

मुर्गी से अधिकतम लाभ अण्डे या मीट रूप में प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि उसे सन्तुलित आहार दिया जाए ताकि न केवल उसके स्वयं के शरीर की आवश्यकता की पूर्ति हो सके, अपितु उत्पादन से सम्बन्धित तत्वों की भी कमी न रहे। यह भी ध्यान रखना आवश्यक है कि आहार में सब आवश्यक तत्व प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हो तथा आहार की कीमत अधिक न हो। मुर्गी पालन में कुल लागत का 70 प्रतिशत व्यय आहार पर होता है। यदि सन्तुलित आहार न हो तो आहार सम्बन्धी अनेक रोग होंगे। असंतुलित आहार शारीरिक विकास में गतिरोध पैदा करता है, उत्पादन में कमी लाता है, मुर्गी को अनेक रोगों से ग्रसित होने में सहायक होता है।

मुर्गी को स्वस्थ, निरोग रखने के लिए एवं सामान्य विकास एवं उत्पादन पाने के लिए तथा इस व्यवसाय से वांछित आर्थिक लाभ पाने के लिए यह आवश्यक है कि मुर्गी आहार में वे सम्पूर्ण तत्व उचित अनुपात में हो जिनकी मुर्गी को आवश्यकता होती है। आहार तत्व का पूर्णरूपेण विश्लेषण कर उनके गुण/दुर्गण को तथा कीमत को ध्यान में रखकर आहार मिश्रण में उसका प्रयोग किया जाना चाहिए।

संतुलित आहार कैसे बनाएंः

मुर्गी आहार में प्रयोग आने वाली वस्तुओं का पूरा ज्ञान

होना चाहिए, साथ ही मुर्गी की आवश्यकताओं का भी ध्यान होना चाहिए।

यह ध्यान में रखना चाहिए कि किस उम्र की मुर्गी का आहार बनाना है, मुर्गी किस काम के लिए पाली हुई है, अण्डों के लिए अथवा मीट के लिए। वर्ष की ऋतु, आहार सामग्री की दरें आदि को भी ध्यान में रखकर आहार बनाया जाना चाहिए।

पोल्ट्री आहार के विभिन्न अंश मिलानाः

1. विभिन्न अंशों को छोटे–छोटे टुकड़ों में बदलने के लिए उनकी पिसाई करे लेकिन ध्यान रहे कि यह बिल्कुल ही पाऊडर न बन जाए क्योंकि पाऊडर की तरह बन जाने से पक्षियों की जबान पर चिपक जाएगी व उनकी चोंच भी टेढ़ी–मेढ़ी हो सकती है।
2. आहार के लिए अंशों को पीसने के बाद प्रत्येक सामग्री को तोल कर उचित मात्रा में मिलाइए।
3. अब विभिन्न अंशों को या तो फीड मिक्सचर की सहायता से या फिर हाथों से अच्छी तरह आपस में मिला लें।
4. नमक सहित अन्य पौष्टिक अंश या तो पूरे आहार में एक ही बार मिला दें या फिर आहार के अलग–अलग हिस्सों से इन्हें मिलाइए, लेकिन इस बात का ध्यान

रखें कि यह पदार्थ आहार में खूब अच्छी तरह मिल जाए अर्थात् कहीं अधिक व कहीं कम मात्रा में न रहने पाए। विटामिन तत्व ''ब्लैंड रोवोमिक्स'' को पहले थोड़े से आहार में मिलाइए। इस क्रिया को प्रोमिक्सिंग कहते हैं। अब इस विटामिन मिले आहार को समूचे में अच्छी तरह मिला दिया जाता है।

5. मिन्डिफ या बायसिन्डिफ सहित अन्य खनिज पदार्थों को तैयार किए गए आहार में अनुमोदित दर 0.5–2.5 प्रतिशत की मात्रा में मिलाएं।
6. अधिक ऊर्जा वाले मैश राशन में तेल या चिकनाई यानी लार्ड में स्थिरता लाने के लिए बी.एच.टी. सैन्टोन्विन तथा एथोजाइक्विन जैसे एन्टीऑक्सीडेंट विरोध रसायन का 0.125 प्रतिशत की दर में प्रयोग किया जा सकता है। इससे लाभ यह होगा कि गर्मी के मौसम में काफी समय तक आहार को गोदाम में रखने के बावजूद भी उस में दुर्गन्ध पैदा नहीं होगी।
7. शीरा को चोकर, राइस पालिश तथा पीसी हुई मकई के साथ अलग से मिलाना चाहिए।
8. जब भी दो प्रकार के राशन मिलाने की जरूरत पड़े तो विभिन्न अंशों की सही मात्रा में मिलाने के लिए पियर्सन की विधि अपनाइए।
9. इसके अतिरिक्त प्रति क्विंटल दाना–मिश्रण में 50 ग्राम नेफिटन/बायुफुरान, 60 ग्राम आरोफेक– 10 तथा 25 ग्राम वीटा ब्लेण्ड ए.बी.–2 डी.–3 मिलाना आवश्यक है।

आहार व्यवस्थाः

यह ज्ञात करने के लिए कि किस प्रकार का आहार मुर्गी आयु, उत्पादन क्षमता एवं स्थानीय जलवायु के हिसाब से बनाना है। मुर्गीपालक को स्थानीय उपलब्ध आहार सामग्री का चयन कर ''मान्य'' सूत्र के अनुसार आहार को बनाना चाहिए।

1. एक साथ अधिक समय के लिए आहार बना कर नहीं रखें। ऐसा करने से विटामिन/ऐन्टीबायोटिक्स का प्रभाव कम समाप्त हो सकता है।
2. आहार सामग्री को आवश्यकतानुसार पिसा कर प्रयोग में लाएं, बहुत मोटा या बहुत बारीक दाना उचित नहीं होता।
3. आहार की विभिन्न सामग्रियों को मिलाने के लिए मशीन का प्रयोग आवश्यक है। यदि सम–मिश्रण नहीं हुआ तो, वह सामग्री जिसकी मात्रा बहुत कम है, जैसे विटामिन और एन्टीबायोटिक्स अच्छी प्रकार नहीं मिल पाते और पक्षी उसके लाभ से वंचित रह जाते हैं।
4. मुर्गी आहार बनाने के कमरे में जंगली पक्षी, चूहे तथा कीड़े आदि नहीं लाने चाहिए।
5. बने हुए आहार को खुला नहीं छोड़ना चाहिए, यदि सम्भव हो तो उसे बन्द टंकियों में रखें और केवल आवश्यकतानुसार ही निकालें।
6. आहार भण्डार में सीलन या बरसात का पानी नहीं आना चाहिए।
7. सुबह–शाम दिए जाने वाले आहार की मात्रा सुनिश्चित कर लेनी चाहिए।
8. अधिक गर्मी में मैश भिगोकर दिया जा सकता है, इसे अधिक गीला न करें, ठंडे पानी का छींटा ठीक रहता है।
9. यदि आहार बिना मशीन के ही मिलाया जाना हो तो पक्के फर्श का प्रयोग करें, जिसे पूर्णतः साफ एवं कीटाणु रहित किया गया हो।
10. रोगी आदमी से आहार मिश्रण न कराएं। आहार कक्ष में समय–समय पर कीटाणु नाशक औषधि का छिड़काव करते रहें।
11. यदि आहार क्रय–क्रिया द्वारा हो तो उसमें मुख्य तत्व प्रोटीन, रेशे, चर्बी/खनिज आदि का विश्लेषण कराकर ही क्रय करना युक्तिसंगत होगा। किसी भरोसेमन्द संस्थान का आहार ही खरीदा जाना चाहिए।
12. क्रय किए गए आहार को पूर्व वर्णित विधि से भंडार में रखा जाना चाहिए।
13. आहार उपयोग का निरन्तर विवेचन करते रहना आवश्यक है। इससे यह आभास होता है कि मुर्गी वांछित मात्रा में आहार का उपयोग कर रही है या नहीं। इससे उनमें रोग व अन्य असामान्य अवस्था का ज्ञान हो सकता है।
14. चूहों पर नियन्त्रण रखें क्योंकि एक चूहा अण्डा देने वाली सर्वश्रेष्ठ मुर्गी के मुकाबले कहीं अधिक अनाज खा जाता है या उसे नष्ट कर सकता है।

आहार बनाने के बाद कुछ अन्य आवश्यक तथ्य है जिस पर मुर्गीपालक को ध्यान रखना चाहिए।

1. दाने के बर्तन उचित मात्रा में होने चाहिए। एक हैंगिग फीडर (14 किलो) से 18 पक्षी सुविधानुसार आहार प्राप्त कर सकते हैं।
2. आहार बर्तन ऐसे हों जिससे स्थान अधिक न घिरे।
3. आहार बर्तन समय–समय पर धोकर उन्हें कीटनाशक घोल में एक दिन के लिए रख देना चाहिए।
4. आहार बर्तन गैलव्नाइज्ड आयरन से बनाए जाएं तो अच्छा रहेगा क्योंकि उन पर जंग नहीं लगेगा तथा अधिक अवधि तक प्रयोग में लाए जा सकते हैं। यदि बर्तन टीन के हों तो उन्हें बन्द कर देना अच्छा होता है।
5. मुर्गी की आयु के अनुसार बर्तनों का प्रयोग किया जाना चाहिए।
6. बर्तन ऐसे होने चाहिए कि उनमें आहार बिखरे नहीं, सामान्यतः आहार बर्तनों को 2/3 भाग से अधिक नहीं भरना चाहिए।
7. आहार देने का समय निश्चित होना चाहिए तथा एक ही आदमी यह कार्य करे तो मुर्गी चौंकेगी नहीं। यदि इसे अण्डा इक्ट्ठा करने के साथ ही किया जाए तो मुर्गियां एक ही बार तंग होंगी।
8. आहार के बर्तन मुर्गीघर में इस प्रकार रखे जाने चाहिए कि वे सामानान्तर पर हर कक्ष में उपलब्ध हों।
9. यह इसलिए भी आवश्यक है कि मुर्गी–समूह, मुर्गी–गृह में अपना–अपना स्थान, आहार–पानी/पीने/अण्डा देने हेतु चुन लेती है तथा उनमें उस स्थान पर यदि आवश्यक आहार प्रकाश नहीं मिले तो भी स्ट्रेस हो सकता है तथा अण्डा उत्पादन में कमी हो सकती है।
10. मुर्गी–गृह में आहार बर्तन इस प्रकार लगाएं कि ऊँचाई ठीक हो तथा उन पर प्रकाश आदि का प्रयोग कर इससे छुटकारा पाया जा सकता है।

विस्तार शिक्षा की विभिन्न गतिविधियों (ट्रेनिंग आदि) के लिए पशु विज्ञान केन्द्र

क्र.सं.	पशु विज्ञान केन्द्र	वैज्ञानिक का नाम
1.	पशु विज्ञान केन्द्र, फ्रैन्डस कॉलोनी, नजदीक करनाल बाई पास चौक, कैथल	डॉ. रमेश कुमार
2.	पशु विज्ञान केन्द्र, वैटेनरी पोली क्लीनिक, सोनीपत	डॉ. इन्द्रजीत सिंह
3.	पशु विज्ञान केन्द्र, पांडु पिंडारा, जींद	डॉ. रमेश कुमार
4.	पशु विज्ञान केन्द्र, सिरसा	डॉ. बी.एस. श्योकन्द
5.	पशु विज्ञान केन्द्र, भिवानी	डॉ. धर्मवीर सिंह दहिया
6.	पशु विज्ञान केन्द्र, रोहतक	डॉ. राजेन्द्र सिंह
7.	पशु विज्ञान केन्द्र, युगल विहार (दाहलीवास) रेवाड़ी	डॉ. अभय सिंह यादव
8.	पशु विज्ञान केन्द्र, नजदीक मिनी सैक्ट्रेट, गुड़गांव	डॉ. कृष्ण कुमार यादव
9.	विस्तार शिक्षा निदेशालय, लुवास, हिसार	डॉ. सज्जन सिंह एवं डॉ. देवेन्द्र सिंह
10.	पशु विज्ञान केन्द्र, अम्बाला	–

अश्वग्रन्थि रोग (ग्लैन्डर्स)

दिनेश गुलिया[1], प्रवीन कुमार एवं दिपिन चन्द्र यादव[3]

[1]पशु औषधि विज्ञान विभाग, [2]पशु चिकित्सक, पशुपालन विभाग, पंजाब, [3]पशु उत्पादन एवं प्रबंधन विभाग
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

अश्वग्रन्थि रोग एक जीवाणु जनित रोग है जो बरकहोलड़ेरिया मैलियाई जीवाणु से होता है। यह रोग मुख्यतः घोड़ा प्रजाति के पशुओं जैसे घोड़ा, खच्चर व गधे में अधिक होता है। इन पशुओ में यह जीवाणु नाक में घाव व लसिका वाहिकाओं पर गांठे व घाव बनाता है तथा निमोनिया करता है। मनुष्य में सम्पर्क से संक्रमण लग जाता है, जिससे इस रोग से बुखार, थकान, भूख न लगना, पीलीया, सिरदर्द, पैर व टांगो में दर्द तथा चेहरे व हाथों पर गांठे बनती है।

रोग कैसे फैलता है?

यह रोग मुख्यतः घोड़ा प्रजाति के पशुओं में होता है। वैसे संक्रमण ऊंट, बिल्ली, शेर, चीते, तेन्दुआ में भी पाया गया है किन्तु यह रोग कुत्तों व खरगोशों में बिल्कुल भी नहीं होता है। रोग से प्रभावित पशुओं की लसिका गाठें कठोर व दर्द युक्त हो जाती है। पिछली टांगो के अन्दर की तरफ की लसिका गांठ सूज जाती है। लसिका वहिकाओं पर गांठे बन जाती है जो फूटकर मवाद बहाती है। प्रभावित पशु की नाक से पानी बहता है जिसमें मवाद भरा होता है, नाक से स्त्राव गहरे पीले रंग का तथा तैलीय होता है। नाक के स्त्राव से काफी संख्या में जीवाणु उत्सर्जित होते रहते है। पिछली टांग की लसिका वाहिकाओं में जगह–जगह पर गांठे बन जाती है तथा एक शृंखला जैसी दिखती है, जिन्हें फारसी कहते है। यह रूप खच्चरों में अधिक पाया जाता है तथा इन गांठो के फूटने से पीला मवाद बाहर निकलता है। प्रभावित पशु चारा दाना कम खाते हैं, पशु लंगड़ाकर चलता है तथा तेज़ बुखार व न्यूमोनिया हो जाता है। रोगी पशु को सांस लेने में तकलीफ होती है तथा बार–बार खांसी आती है। यह रोग गधों को तीव्र रूप से प्रभावित करता है तथा मृत्यु का कारण बनता है।

पशुओं से मनुष्य में ये रोग कैसे फैलता है?

मनुष्यों में यह रोग व्यवसाय से सम्बन्धित रोग है जो उन लोगों में अधिक होता है जो घोड़ा, खच्चर या गधे के सम्पर्क में रहते हैं इसमें तांगे वाला, कुम्हार, घुड़सवार, पशुचिकित्सक, पशुसहायक आदि लोग शामिल है। रोगी पशु के सम्पर्क से सांस द्वारा मनुष्य में रोग के जीवाणु प्रवेश कर जाते हैं। प्रयोगशाला में संक्रमण इस जीवाणु पर कार्य करने वाले लोगों में अधिक होता है इनमें वैज्ञानिक व उनके

सहायक शामिल होते है। जब कोई व्यक्ति रोगी पशु के पास रहता है या उसके परिक्षण के लिए पशु की नाक देखता है तब संक्रमण लगने की सम्भावना अधिक होती है। इसी प्रकार प्रभावित घोड़े या खच्चर के तांगे में कार्य करते रहने से जो व्यक्ति उनके सम्पर्क में आता है उन सब में रोग होने की आशंका रहती है। प्रभावित पशु की लसिका वाहिकाओं व गांठों से निकलने वाले स्राव से संक्रमण मक्खियों द्वारा भी मनुष्य में फैल सकता है। रोगी पशु पर सवारी करने वाले व्यक्ति में संक्रमण त्वचा के सम्पर्क से तथा सांस द्वारा होता है। यह जीवाणु आँख द्वारा भी शरीर में घुस जाता है।

रोग से बचाव के लिए क्या करें?

1. इस रोग के बचाव के लिए व्यक्तिगत स्वच्छत्ता आवश्यक है रोगी पशु का
2. प्रभावित पशु को दूर रखें तथा रोग का पता चलते ही पशु पालन विभाग के अधिकारी को सूचित करे।
3. प्रभावित पशु का उपचार नहीं करना चाहिए क्योंकि ये पशु बिना लक्षण प्रकट किए भी संक्रमक होता है। अतः मनुष्य में रोग लगने की संभावना को देखते हुए पशु को नष्ट करना ही उत्तम उपाय है।
4. प्रभावित पशु के मृत शरीर को जमीन में गहराई में दबाएं तथा उस पर चुने का छिड़काव करें।
5. पशु का चारा, बिछाव, लीन्द इत्यादि को जला दें।
6. घुड़साल की अच्छी तरह से साफाई करें तथा उसका शुद्धिकरण लाल दवाई या चूना/सफेदी के छिड़काव से करें।

मुर्गियों में एसाइटिस रोग

धर्मवीर सिंह दहिया, रमेश कुमार एवं देवेन्द्र सिंह

मुख्य विस्तार विशेषज्ञ, विस्तार शिक्षा निदेशालय लुवास, हिसार

मुर्गियों में प्रायः चयापचय रोग काफी बड़ी संख्या में बीमारी व मृत्यु के कारण बनते हैं। यह रोग ब्रॉयलर एवं लेयर दोनों प्रकार की मुर्गियों को प्रभावित करते हैं। यह रोग प्रायः उन मुर्गियों में अधिक देखे जाते हैं जो तेजी से बढ़ती हैं या अधिक अण्डे देती हैं क्योंकि इन मुर्गियों का चयापचय/मेटाबोलिज़म अत्याधिक तेज होता है, जिसके चलते शरीर में तेजी से परिवर्तन आते हैं व विषैले तत्व (टॉक्सिन) बनते हैं जो शरीर में नुकसान पहुँचाते हैं तथा रोग के कारक बनते हैं।

जलोदर (एसाइटिस) में रोग मुर्गियों के पेट के चारों ओर पानी का जमाव हो जाता है। इस रोग को पलमोनरी हाइपरटेंशन सिन्ड्रोम या वॉटर बैली भी कहा जाता है। यह रोग मुर्गीपालकों के आर्थिक नुकसान के प्रमुख कारणों में से एक है तथा कभी–कभी 25% तक मृत्युदर सामान्यतः प्रभावित मुर्गियों में होती ही है।

रोग के कारणः

जलोदर रोग कोई संक्रामक रोग नहीं है, अपितु यह रोग कोशिकाओं को उपयुक्त मात्रा में ऑक्सीजन की उपलब्धता प्रभावित/अवरुद्ध होने के कारण होता है। एसाइटिस रोग प्रथम बार सन् 1968 में बोलिविया, दक्षिण अमेरिका में समुद्र तल से अधिक ऊँचाई पर पाये जाने वाली मुर्गियों में पाया गया था। ऊँचाई पर हवा में ऑक्सीजन की कमी के चलते, शरीर की कोशिकाओं को जरूरत के हिसाब से ऑक्सीजन ना मिल पाने के कारण यह रोग होता है। गत वर्षों में मुर्गियों की प्रजातियों में तेज़ी से वजन बढ़ने वाली प्रजातियों का चलन बढ़ गया है जिनका चयापचय अधिक होता हैं, जिसके चलते कोशिकाओं में ऑक्सीजन की आवश्यकता बढ़ जाती है तथा पर्याप्त मात्रा में ऑक्सीजन ना मिलने के कारण समुद्र तल से कम ऊँचाई वाले क्षेत्रों में भी मुर्गियों में यह रोग होने लगा हैं। मुर्गियों में रोग अधिक होने के कारण यह भी है कि उनके फेफड़े स्तनधारियों के तरह ज़्यादा फैल नहीं पाते क्योंकि वह पसलियों की बीच कसकर स्थापित

होते हैं, जिसके चलते वह ज्यादा नहीं फैल पाते तथा अधिक हवा की आवश्यकता अनुसार हवा नहीं ले पाते हैं। मुर्गियों की सूक्ष्म रक्त नलिकायें भी बहुत कम फैल पाती है, इस कारण उनमें अधिक खून की मात्रा नहीं समा पाती हैं। मुर्गीपालकों को लेखक बताना चाहेंगे कि रक्त ही शरीर के विभिन्न भागों में ऑक्सीजन पहुँचाने का कार्य करता है।

इस बीमारी का ब्रॉयलर मुर्गियों में अधिक होने के कारण यह भी है कि इनका वज़न बहुत तेज़ी से बढ़ता है तथा छाती की मॉसपेशियाँ बड़ी हो जाती है, किंतु इनके फेफड़ों का आकार उनके शरीर के अनुपात की अपेक्षा धीरे बढ़ता है। ब्रॉयलर की चयापचय/मेटाबोलिक दर अधिक होने के कारण, ऑक्सीजन की ज्यादा जरूरत होती है किंतु फेफड़ों का आकार छोटा होने के कारण ऑक्सीजन नहीं ले पाते, जिसके क्रम में खून में ऑक्सीजन की कमी हो जाती

है, जो कि जलोदर रोग होने का मुख्य कारक है।

इसके अलावा ब्रॉयलर में लाल रक्त कोषिकायें, लेयर मुर्गियों की अपेक्षा कम लचीली होती है, जिसके चलते उनके आकार में परिवर्तन कम ही हो पाता हैं। ब्रॉयलर में रक्त वायु बैरियर (अवरोध) लेयर की तुलना में अधिक मोटा होता है अर्थात् जो परत फेफड़ों में वायु नलिकाओं व सूक्ष्म रक्त नलिकाओं के बीच होती है, जिसके चलते ऑक्सीजन का रक्त में मिलना उतनी अच्छी तरह नहीं हो पाता। एंटीऑक्सीडन्ट की कमी के कारण शरीर में बनने वाले दूषित तत्व (फ्री रेडिकल्स) के प्रभाव के कारण भी यह रोग अधिक होता है।

सर्दी/कम तापमान में मेटाबोलिक दर बढ़ जाती है, जिसके फलस्वरूप ऑक्सीजन की आवश्यकता बढ़ जाती है। सर्दियों में इस रोग के अधिक होने का एक कारण यह भी है कि सर्दियों में बाड़ें के पर्दे बंद होने के कारण, हवा का आवाजाही रूक जाती है, जिसके चलते बाड़े में ऑक्सीजन की कमी हो जाती है। यदि बाड़े में मुर्गियों की संख्या अधिक हो अर्थात् भीड़ ज्यादा हो तो समस्या और बढ़ जाती है। बंद बाड़े में अमोनिया गैस की मात्रा भी अधिक हो जाती है, जो कि म्यूक्स झिल्लियों व अन्य कोशिकाओं को बहुत नुकसान पहुँचाती है। दाने में सोडियम की अधिकता व कम फॉस्फोरस का होना भी रोग होने में सहायक है। दाने में अधिक सोडियम के चलते रक्त में पानी अधिक होने के कारण रक्त की मात्रा अधिक हो जाती है, जिससे रक्त नलिकाओं में दबाव बढ़ने लगता है। इसके अलावा अधिक सोडियम की मात्रा लाल रक्त कणिकाओं के लचीलेपन को भी कम करती है जिससे उनकी ऑक्सीजन ले जाने की क्षमता में कमी आती है। अधिक गर्मी (हीट स्ट्रैस) में भी ऑक्सीजन की जरूरत बढ़ जाती है।

रोग का विकासः

हाईऑलटिट्यूड एसाइटिस– समुद्र तल से अधिक ऊँचाई वाले क्षेत्रों में होने वाला एसाइटिस। समुद्र तल से अधिक ऊँचाई पर प्राकृतिक रूप से ऑक्सीजन की मात्रा कम होती है, फलस्वरूप मुर्गियों का पर्याप्त ऑक्सीजन नहीं मिल पाती है। रक्त में हीमोग्लोबिन ऑक्सीजन से सैचुरेट नहीं हो पाता है, क्रमशः कोशिकाओं में ऑक्सीजन की कमी होने लगती है। ऑक्सीजन की रक्त में कमी के चलते, लाल रक्त कणिकाओं का उत्पादन बढ़ जाता है, जिससे रक्त की ऑक्सीजन ले जाने की क्षमता में वृद्धि हो सके। लाल रक्त कणिकाओं की संख्या बढ़ने से रक्त अधिक गाढ़ा हो जाता है, जिसके फलस्वरूप खून का नलिकाओं में प्रवाह धीमा व मुश्किल हो जाता है। वैसे भी नई रक्त कणिकायें अधिक बड़ी होती है व आसानी से आकार नहीं बदल पाती जिसके कारण ये फेफड़ों की छोटी–छोटी व संकरी रक्त नलिकाओं से आसानी से नहीं निकल पाती है। रक्त प्रवाह में अवरोध के कारण हृदय पर अधिक दबाव पड़ता है क्रमशः पलमोनरी धमनी (हृदय से फेफड़ों में रक्त ले जाने वाली नलिका) में रक्त का दबाव अधिक हो जाता है। रक्त का संचार करने के प्रयास में हृदय के दाहिने वैंट्रीकल की दिवार मोटी हो जाती है तथा साथ ही हृदय के ओरिकल व वैंट्रीकल के बीच मौजूद एट्रियोवैंट्रिकल वाल्व भी मोटी हो जाती है। इस अवस्था को ''वाल्वूलर इन्सैफिशियन्सी'' कहा जाता है। इस वाल्व का काम वैंट्रीकल के सिकुड़ने पर, खून का प्रवास वापिस दाहिने एट्रीयम में (जो वैंट्रीकल के ऊपर के तरफ होता है) रोकना होता है, ताकि सारा खून पलमोनरी धमनी में जायें तथा फेफड़ों को पहुँच सके। खून के ऑरीकल में अर्थात् विपरीत दिशा में प्रवाहित होने के कारण वैनाकावा (शरीर में दूषित रक्त को राइट्र एट्रीयम में पहुँचाने वाली शिरा) में खून का दबाव बढ़ने लगता है। क्रमशः लीवर की शिराओं व अन्य शिराओं में रक्त का दबाव बढ़ने लगता है, फलस्वरूप लीवर में मौजूद जगह में रक्त इक्कठा होने लगता है तथा लीवर में रक्त का दबाव बढ़ने लगता है। इन सभी बदलावों के कारण, लीवर की सतह से रक्त से पानी जैसा पदार्थ (पलाज़्मा) निकलने लगता है, जो कि मुर्गी के पेट के नीचे व आस पास के हिस्सों में भर जाता है तथा इसी को एसाइटिस/जलोदर कहा जाता है।

लो–ऑलटीट्यूड एसाइटिस–

समुद्र तल के पास ऑक्सीजन की कमी नहीं होती अपितु जैसा की ऊपर वर्णित है की ब्रॉयलर में तेज़ी से बढ़ने के कारण, चयापचय दर अधिक होती है तथा ऑक्सीजन की डिमांड बढ़ जाती है। अधिक ऑक्सीजन की आवश्यकता को पूरा करने के लिए, रक्त प्रवाह बढ़ जाता है, किंतु ब्रॉयलर की रक्त नलिकाओं में कम लचीलेपन के चलते रक्त प्रवाह में रूकावट आती है, क्रमशः पलमोनरी धमनी में ये दबाव बढ़ने लगता है। बाकि बदलाव हाई ऑलटीट्यूड जलोदर के समान ही होते हैं।

रोग के लक्षणः

मुर्गियों की अचानक मृत्यु हो जाती है। यह समस्या प्रायः पाँचवे व छठे सप्ताह में अधिक होती है क्योंकि इस समय वजन बहुत तेज़ी से बढ़ता है। वैसे मृत्युदर चौथे सप्ताह में सबसे अधिक देखने को मिलती है। दाहिने वैन्ट्रीकल के कार्य करना कम या बंद (फेल) होने के पश्चात् ही लक्षण उत्पन्न होने शुरू हो जाते है। प्रभावित मुर्गियों का वजन धीरे बढ़ता है तथा वह सुस्त तथा उनके पंख रूखे रूखे हो जाते है। सिर पर पीलापन तथा कलंगी भी प्रभावित होती है। सफेद मुर्गियाँ भी कांतिहीन हो जाती हैं। गंभीर रूप से प्रभावित मुर्गियों में पेट के पास का हिस्सा पानी भरने के कारण बड़ा हो जाता है। मुर्गियाँ चलने व घूमने की इच्छुक नहीं रहती तथा उन्हें सांस लेने में कठिनाई होती है या वह हॉफती रहती हैं तथा शरीर नीला पड़ने लगता है।

शव परीक्षण पर दिखने वाले बदलावः

सबसे पहले शरीर में पानी जैसा तत्व भरा हुआ मिलता है। हृदय का आकार लगभग दोगुना हो जाता है तथा कुछ मुर्गियों में हृदय की परतों में भी पानी भरा हुआ मिलता है। फेफड़े अत्याधिक लाल हो जाते है तथा उनमें भी पानी जैसा द्रव्य पाया जाता है। सभी मृत मुर्गियों में पानी भरा मिले यह आवश्यक नहीं है। ऐसे पक्षियों में लिवर में सूजन, हृदय का बड़ा होना, फेफड़ों में खून का जमाव व फेफड़ों में पानी भरना देखा जा सकता है। प्रायः इनके शव पीठ के बल पाये जाते हैं।

रोग का नियंत्रण एवं बचावः

- इस रोग की कोई प्रभावशाली चिकित्सा नहीं है क्योंकि लक्षण आने पर शीघ्र ही मृत्यु हो जाती है, फ्रूसामाइड, विटामिन–सी, विटामिन–ई व सिलेनियम मृत्यु को कम करने में सहायक सिद्ध होते हैं।
- एसाइटिस का बचाव संयमित आहार या अल्प ऊर्जा वाले दाने द्वारा किया जा सकता है। 7 से 21 दिन के मुर्गी में यह सिद्धान्त अपनाये जाते हैं। किंतु इस पद्धति का अनुसरण करने से उनकी वज़न बढ़ने की दर पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इसके अलावा मुर्गियों को सर्दी से बचाना चाहिये। बाड़े में हवा की आवाजाही उपयुक्त होनी चाहिए ताकि बाड़े में पर्याप्त ऑक्सीजन रहे तथा अमोनिया की मात्राा भी ना बढ़ने सके। बाडे में धूल मिट्टी भी नहीं होने देनी चाहिये क्योंकि इनसे फेफड़ों पर दुष्प्रभाव पड़ता है तथा रोग होने के कारण बनते हैं।
- दाने में सोडियम की मात्रा 2000 पी.पी.एम. से अधिक नहीं होनी चाहिए। सोडियम की अधिकता खून में पानी को बढ़ाकर रक्तचाप को बढ़ाती है, जिसके चलते यह रोग हो सकता है। दाने में भी विषैले पदार्थ/टॉक्सिन नहीं होने चाहिये क्योंकि यह लिवर को नुकसान पहुँचाते हैं। मुर्गियों के दाने में एक प्रतिशत सोडियम बाइकार्बोनेट मिलाने से रक्त कोशिकाओं में क्षारमयता बढ़ जाती है जिसके फलस्वरूप हाइड्रोजन ऑयन की मात्रा कम हो जाती है, जो कि श्वास नलियों को सुकड़वाने का कार्य करता है। अतः श्वास नलियाँ क्षारमयता बढ़ने की वजह से नहीं सिकुड़ती हैं तथा मुर्गी को पर्याप्त हवा सांस द्वारा मिलती है। दाने में एल–आरजीनिन अमीनोऍसिड भी असाइटिस के कारण होने वाली मृत्यु दर को कम करता है क्योंकि यह अमीनोएसिड नाइट्रिक ऑक्साइड गैस (रक्त नलिकाओं को फैलाने वाली गैस) के बनने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
- बाड़े में नमी, हवा की रफ्तार व तापमान नियंत्रित एवं उचित होने चाहिये।
- विटामिन ई व सिलेनियम भी शरीर में बनने वाले जहरीले तत्वों को नष्ट कर फेफड़ो व लीवर की रक्षा करते है जिससे रोग होने की संभावना कम हो जाती है।

उपरोक्त वर्णित बातों एवं सावधानियों पर ध्यान देकर स्वस्थ एवं लाभकारी मुर्गीपालन किया जा सकता है तथा इस रोग से होने वाले आर्थिक नुकसान से बचा जा सकता है।

पशुओं में मिट्टी खाने की समस्या

मनजीत[1], आर्यन[2] एवं राजेश दलाल[3]

[1]पशु अनुवांशिकी एवं प्रजनन विभाग, [2]पशु औषधि एवं जहर विज्ञान विभाग एवं [3]पशु पोषण विभाग
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

कई बार पशु–पालक यह समस्या लेकर आते हैं कि उनका पशु ऐसी वस्तुओं को खा जाता है या खाने की कोशिश करता है, जो कि पशुओं को नहीं खानी चाहिए। ये वस्तुएं कई प्रकार की हो सकती हैं जैसे कि कपड़ा, चमड़ा, कागज, अखबार, हड्डियां, मिट्टी के खिलौने, मल–मूत्र आदि। इसके अलावा कई बार पशुओं को बार–बार दीवार को चाटते भी देखा गया है। यह एक प्रकार का रोग है जिसे PICA कहा जाता है।

कारण:

पशुओं में मिट्टी खाने की समस्या के कई कारण हो सकते हैं उनमें से प्रमुख कारण हैं–

1. पशु के शरीर में खनिज लवणों (फास्फोरस, कैल्शियम, सोडियम क्लोराइड, कोबाल्ट आदि की कमी होना।
2. पशु के शरीर पर अधिक मात्रा में बाह्य परजीवियों का लगना।
3. पशु के शरीर में अधिक मात्रा में आन्तरिक परजीवियों का होना।
4. पशु के चारे में प्रोटीन युक्त पदार्थों की कमी होना।
5. पशु की पाचन क्रिया का लम्बे समय तक खराब होना।

कई बार सामान्य पशुओं में भी यह रोग पशु की बुरी आदत के रूप में पाया जाता है।

लक्षण:

पशुओं में मिट्टी खाने के कारण विभिन्न प्रकार के दुष्प्रभाव देखने को मिलते हैं–

- पशु शारीरिक रूप से धीरे–धीरे कमजोर होने लगता है।
- पशु की अन्दरूनी शक्ति जिसे हम रोग–प्रतिरोधक क्षमता कहते हैं वह कम हो जाती है। इससे पशु के अन्दर आन्तरिक परजीवी एवं शरीर के ऊपर बाह्य परजीवों का प्रकोप बढ़ जाता है।
- मादा पशुओं में नया दूध न होने की समस्या हो सकती है।
- पशुओं की बाह्य त्वचा रूखी हो जाती है एवं भेड़ों में ऊन की मात्रा व गुणवत्ता में कमी आ जाती है।
- कई पशु दूसरे पशुओं का मूत्र पीते हुए भी देखे जा सकते हैं।
- शहरों में इस समस्या से ग्रस्त पशुओं का हम मांस से बचे हुए अवशेषों को खाते हुए भी देख सकते हैं।

पहचान:

इस रोग की पहचान हम ऊपर दिए हुए लक्षणों के आधार पर कर सकते हैं। इसके लिए इस रोग के लिए जिम्मेदार कारणों का पता लगाने के लिए पशु के गोबर, पेशाब व खून की जांच प्रयोगशाला में करवाई जा सकती है।

उपचार एवं बचाव:

इस समस्या से बचाव हेतु पशु चिकित्सक से परामर्श लेकर निम्न तरीके अपनाने चाहिए–

1. पशु को संतुलित आहार देना चाहिए जिसमें खनिज लवण की उचित मात्रा होनी चाहिए।
2. पशु को नियमित रूप से पेट के कीड़ों की दवाई देनी चाहिए।
3. बाह्य परजीवों से बचाव के लिए पशु को 1 मि.ली. साइपरमैथरिन को 1 लिटर पानी में डालकर नहलाना चाहिए।
4. पशु को साफ पानी पिलाना चाहिए।
5. इस आदत से छुटकारा पाने के लिए पशु को छींकी भी लगाई जा सकती है।

बकरी की (पी.पी.आर) बीमारी

लक्ष्मी बाई[1], रामकरण[2] एवं प्रीति[3]

[1]पशु चिकित्सा औषधि विभाग, [2]पशु चिकित्सा शरीर क्रिया विज्ञान एवं जैव रसायन विभाग,
[3]पशु चिकित्सा जन स्वास्थ्य विभाग
लाला लाजपतराय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

बकरी की बीमारियों में सबसे खतरनाक एवं प्राण घातक बीमारी पी.पी.आर है। यह बीमारी सबसे पहले 1942 में पश्चिमी अफ्रीका में देखने को मिली थी। लेकिन आज यह बीमारी पूरे विश्व में फैल चुकी है और इस बीमारी से लगभग हर देश की बकरी ग्रसित हो रही है। यह बीमारी किसी भी उम्र की बकरी को हो सकती है। जिन भी बकरियों को यह बीमारी हो जाती है उनका जीवित रहना बेहद मुश्किल होता है अर्थात् इस बीमारी में मृत्यु दर काफी उच्च (90 प्रतिशत तक) रहती है।

जिससे न केवल बकरी पालन करने वाले व्यक्ति का नुकसान होता है बल्कि राष्ट्र की आर्थिक स्थिति पर भी इसका बेहद गहरा असर पड़ता है। बकरी की यह बीमारी वायरल है और संक्रामक भी और इसके विषाणु सामान्यः हवा से, खाने से, पानी पीने से बकरी के शरीर के अंदर प्रविष्ट कर जाते है।

मुख्य रूप से पी.पी.आर बकरी और भेड़ों की बीमारी है। लेकिन भेड़ों की अपेक्षा बकरी में बीमारी गंभीर होती है। चार महीने से अधिक और एक वर्ष से कम आयु के बकरी के बच्चे सबसे अधिक प्रभावित होते हैं। मवेशी और भैंस रोग प्रसारित नहीं करते। शेर और ऊँटों में पी.पी.आर रवी एंटीजन पाया गया है। सूअरों की इस बीमारी के प्रसार में कई भूमिका नहीं है। यह मनुष्यों को संक्रमित नहीं करता। विषाणु आँख, नाक, मौखिक स्त्राव और जानवरों के मल में होते है। वायरस रेट्रोफोरैन्जियल म्यूकोस में प्रवेश करके एक वारीमिया स्थापित करता है और विशेष रूप से पोषण, लिम्फोइड और श्वसन प्रणाली को नुकसान पहुँचाता है। गंभीर दस्त से बकरी की मौत भी हो सकती है। पी.पी.आर गर्भवती बकरियों में गर्भपात का कारण बनता है।

लक्षणः

- क्षेत्र स्थितियों में अष्मायन अवधि 2–6 दिनों की हो

सकती है। तीव्र रूप में बुखार अचानक कम से कम 40–41 डिग्री सेल्सियस के साथ होता है।

- प्रभावित बकरियों निराशा, छींकने, आँखें और नाक से पानी के समान स्त्राव दिखाती है। इस चरण के दौरान किसान अकसर सोचते हैं कि पशु को ठंड लग गई है और ठंड से सुरक्षा प्रदान करने का प्रयास किया जाता है। इस प्रक्रिया में बकरियों को इकट्ठा किया जाता है और इससे अधिक बीमारी फैलती है। दो–तीन दिनों के बाद असतत घावें मुंह में विकसित होती है और पूरे मौखिक श्लेष्म के ऊपर फैल जाती है।

- इस चरण के दौरान मुंह से दुर्गंध आती है और जानवर गले, मुँह और होंठ की सूजन के कारण खाने में असमर्थ रहता है। बाद में नाक और आँख का स्त्रागाठा हो जाता है इससे पलकें चटक जाती हैं और नाक आंशिक रूप से एक जाता है।
- न्यूमोनिया के कारण खांसी और सांस लेने में तकलीफ हो सकती है।
- मृत्यु मुख्यताः बीमारी के शुरू होने के एक सप्ताह के भीतर हो जाती है।

उपचार और नियंत्रणः

- पी.पी.आर वायरल रोग होने के कारण इसका कोई विशेष उपचार तो सम्भव नहीं है मृत्यु दर को दवाइयों के उपयोग से कम किया जा सकता है। दवाइयां बैकटीरिया और परजीवी जटिलताओं को नियंत्रित करने में सहायक होती है। विशेष रूप से ऑक्सीटेटासायक्लिन और कलोअैराट्रासाईक्लिन को संक्रमण रोकने के लिए प्रयोग में लाया जा सकता है। ऑखों, नाक और मुंह के आसपास के घावों को दिन में दो बार कॉटन से साफ करना चाहिए।
- पाँच प्रतिशत बोरोग्लिसरीन के साथ मुंह धोने, तरल चिकित्सा और एंटी–माइक्रोबियल जैसे कि एनरोफलॉकसासिन या सेफटीओफुर की खुराक देकर बकरी में पी.पी.आर के फैलने के दौरान मृत्यु दर को कम करने में लाभ हो सकता है। स्वास्थ्य कर्मचारियों को पहले अप्रभावित बकरियों का निरीक्षण करना चाहिए और इसके बाद ही प्रभावित बकरियों का उपचार किया जाना चाहिए।
- संक्रमण के प्रसार को नियंत्रित करने के लिए स्वस्थ बकरे/बकरियों को प्रभावित बकरियों से अलग करना चाहिए। प्रभावित बकरों को पौष्टिक नरम, नम, स्वादिष्ट आहार दिया जाना चाहिए।
- प्रभावित बकरियों के शवों को जलाना या दफनाना चाहिए संपर्क में आये स्थानों और वस्तुओं की सफाई या उचित निपरान आवश्यक है।
- टीकाकरण ही इस बीमारी को रोकने का एकमात्र उपाय है– टीके कम से कम 3 साल के लिए पशु की रक्षा कर सकते है। चार महीने के उम्र के बच्चे को यह टीका दिया जाता है। तीन वर्ष से अधिक के लिए रखे गए नर और मादा बकरियों को पुनः तीन साल के बाद यह टीका लगाया जाना चाहिए। किसानों के लिए यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि किसानों को कम से कम 3 सप्ताह तक (टीका लगने उपरांत) बकरी को परिवहन और खराब मौसम जैसे तनाव से बचना चाहिए।

930-000-0857

whatsapp

लुवास पशुपालक हेल्पलाइन नम्बर

पशुओं में ब्याने की अवधि में होने वाले प्रमुख रोग

राजेन्द्र यादव[1], संदीप[2] एवं पंकज कुमार[3]

[1]क्षेत्रीय पशु चिकित्सा, रोग निदान एवं विस्तार केन्द्र, महेन्द्रगढ़

[2]पशु चिकित्सक, पशुपालन विभाग; [3]पशु रोग जाँच प्रयोगशाला, रोहतक (लुवास, हिसार)

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

दुधारू पशुओं में ब्याने/ब्यांत से लगभग एक महिना पहले एवं ब्याने के एक महिना बाद का समय संक्रमण काल कहलाता है। मुख्यतः गाय एवं भैंस में यह एक अति संवेदनशील अवस्था होती है, क्योंकि इस अवधि के दौरान पशु के शरीर में बहुत कम समय में काफी परिवर्तन देखने को मिलते हैं। शरीर में होने वाले इन परिवर्तनों की वजह से इस अवस्था के दौरान पशु को कार्य तनाव का सामना करना पड़ता है। शरीर में होने वाले इन परिवर्तनों एवं तनाव की वजह से पशु के शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है, जिसकी वजह से इन पशु के रोगग्रस्त होने की संभावनाएं बढ़ जाती हैं। इस अवस्था के दौरान पशु के शरीर में पोषक तत्वों की मांग भी बढ़ जाती है। जिसकी वजह से भी पशु के शरीर में विभिन्न अल्पता रोग होने की संभावनाएं भी बढ़ जाती है। दुधारू पशुओं में इस संक्रमण काल के दौरान होने वाले प्रमुख रोग एवं समस्याएं निम्नलिखित हो सकती है–

(1) दुग्ध ज्वर रोगः यह रोग मादा पशुओं में ब्याने से कुछ दिन पहले या कुछ दिन बाद तक होने वाला एक खतरनाक रोग है। मुख्यतः (80 प्रतिशत) यह रोग पशु के ब्याने के

पश्चात् पहले 48 घन्टों में ज्यादा होता है। देशी भाषा में इस रोग को कई जगह पर पशु का सुन्नपात में आना या पशु का ठण्ड में आना भी कहा जाता है।

दुग्ध ज्वर रोग का मुख्य कारण पशु के शरीर में कैल्शियम लवण की कमी होना है। जर्सी गाय एवं जाफराबादी भैंस की नस्लों में यह रोग ज्यादा होता है। दुग्ध ज्वर रोग की संभावनाएं 5–10 वर्ष की उम्र के पशुओं में मुख्यतः 3–7वीं ब्यांत के दौरान ज्यादा होती है। प्रायः अत्यधिक दूध उत्पादन करने वाले पशुओं में यह रोग ज्यादा देखने को मिलता है। पशु की ब्यांत के दौरान अत्यधिक ठण्डा वातावरण एवं लम्बी दूरी तक पशु को लेकर जाना, आदि भी इस रोग के होने के लिए सहायक सिद्ध हो सकते हैं। दुग्ध ज्वर रोग की शुरूआती अवस्था में मांसपेशियों में जकड़न एवं उत्तेजना देखने को मिल सकती है, जो कि बहुत ही कम समय (कुछ घंटे) के लिए होती है। इसके पश्चात् इस रोग में पशु खड़ा नहीं रह पाता एवं बैठ जाता है, तथा गर्दन को घुमाकर पीछे की तरफ देखने लगता है। इसके अतिरिक्त पशु का सुस्त हो जाना, शरीर का तापमान कम हो जाना, आंखों की पुतलियों का चौड़ा हो जाना, गुदा द्वार से अपने आप गोबर का निकलना एवं पशु द्वारा चारा–पानी खाना बंद कर देना इत्यादि लक्षण भी देखने को मिलते हैं। उपरोक्त अवस्थाओं में अगर उचित इलाज नहीं किया जाता है तो पशु जमीन पर लेट जाता है एवं शरीर का तापमान कम होने के कारण शरीर ठण्डा हो जाता है। ज्यादा देर तक लेटे रहने की वजह से पशु को अफारा भी आ जाता है। इस अवस्था में पशु किसी भी बाहरी हरकत का जवाब देना बंद कर देता है एवं पशु की खून की नस मिलना भी मुश्किल हो जाती है। पशु को इस अवस्था में पहुँचने के बाद उपचार होना भी मुश्किल हो जाता है, एवं

मृत्यु होने की संभावनाएं बढ़ जाती हैं।

(2) थनैला रोगः थनैला रोग अयन/गादी/लेवटी एवं थनों को प्रभावित करने वाली समस्या है, जो कि समस्त पशु प्रजातियों के मादा पशुओं जैसे गाय, भैंस, भेड़, बकरी, ऊँटनी इत्यादि में देखने को मिलता है। परन्तु ज्यादातर यह रोग गाय एवं भैंस में पाया जाता है। अधिकांशतः यह रोग जीवाणु संक्रमण के कारण होता है। इस रोग के जीवाणुओं का प्रसारण संक्रमित पानी बिछावन, पशुओं के लिए उपयोग में लाने वाले उपकरण (बर्तन, दूध निकालने के मशीन, आदि) एवं दूध दोहने वाले व्यक्ति के हाथों हो सकता है। पशुशाला में पाई गई अस्वच्छता, गादी या थनों में चोट तथा अपूर्ण दूध निकालना पशु को इस रोग के प्रति संवेदनशील बनाते हैं। सामान्यतः दुग्धकाल के प्रारम्भ या अन्त में यह रोग होने की संभावना ज्यादा होती हैं, तथा व्यस्क/अधिक आयु वाले पशु इस रोग से अधिक प्रभावित होते हैं। थनैला रोग से प्रभावित पशुओं में पाये जाने वाले लक्षणों में दूध की मात्रा एवं गुणवत्ता में गिरावट, गादी या थनों में सुजन एवं दर्द, दूध में छिछड़े या खुन आना या कई बार तो बिल्कुल भी दूध ना आना या दूध की जगह पानी जैसा पदार्थ निकलना, पशु की लेवटी गादी या थनों का पत्थर की तरह सख्त हो जाना या गादी और थनों में गाँठ बन जाना तथा कई बार पशु को बुखार आना एवं भूख का कम हो जाना इत्यादि हो सकते हैं। बहुत बार पशुओं में अलाक्षणिक थनैला भी देखने को मिलता है, जिसमें केवल पशु के दूध की मात्रा एवं गुणवत्ता में काफी कमी देखने को मिलती है। अलाक्षणिक थनैला के कारण पशुपालकों को ज्यादा आर्थिक नुकसान उठाना पड़ता है, क्योंकि लक्षणविहीन होने के कारण पशुपालकों का ज्यादा ध्यान इस तरफ नहीं जा पाता है एवं समय पर उचित उपचार नहीं होता है। पशुओं में उपर दिए गए कोई भी लक्षण दिखाई देने पर पशु का दूध अपने नजदीकी पशु रोग जाँच प्रयोगशाला में जाँच करवाकर तुरंत पशु–चिकित्सक से उचित एवं पूरा ईलाज करवाना चाहिए। उपचार में देरी करने पर यह रोग बढ़ सकता है तथा ठीक होने की संभावना कम हो जाती है, एवं पशु के एक या एक से अधिक थनों के खराब होने की संभावना रहती है। पशुओं में होने वाला थनैला रोग भारत में ही नहीं बल्कि दुनियाभर में पशुओं में होने वाली सबसे मँहगी बीमारियों में से एक है, जिसकी वजह से पशुपालकों को बहुत भारी आर्थिक नुकसान उठाना पड़ता है। इसके अलावा कई बार थनैला रोग के लिए जिम्मेदार जीवाणुओं की वजह से मनुष्य में भी कई प्रकार के रोग होने का खतरा बना रहता है। इन सबको ध्यान में रखते हुए पशुपालकों को चाहिए कि वो अपने पशुओं को थनैला रोग से बचाने के लिए निम्न बातों को ध्यान में रख सकते हैं– रोगग्रस्त पशु को स्वस्थ पशुओं से अलग रखें एवं पशु चिकित्सक की सलाह से पूरा ईलाज करवाएं, रोगग्रस्त पशु का दूध सबसे आखिर में निकालें एवं किसी पशु के यदि एक या दो थनों में ही रोग हुआ हो तो रोगग्रस्त थनों का दूध सबसे आखिर में निकालें एवं ऐसे पशु/थनों का दूध पशुशाला, में या इसके आसपास नहीं फैके, दूध निकालते समय पशुशाला, हाथों, पशु की लेवटी एवं थनों की साफ–सफाई का पूरा ध्यान रखें पशु का दूध समय पर तथा पूरा निकालना चाहिए तथा दूध निकालने के सही तरीका का इस्तेमाल करें एवं अंगूठे का प्रयोग नहीं करना चाहिए, दूध निकालने से पहले एवं बाद में पशु–चिकित्सक की सलाह से लाल दवाई या किसी की अन्य जीवाणुरोधक औषधि से टीट–डीपींग का इस्तेमाल करना चाहिए, किसी पशु का दूध निकालना बंद करना हो तो थनों में पशु–चिकित्सक की सलाह लेकर जीवाणु प्रतिरोधक दवाई डालकर छोड़ना चाहिए, पशु की लेवटी एवं थनों पर चोट लगने से बचाना चाहिए, दूध निकालने के उपरान्त पशु को कम से कम आधा घंटा बैठने नहीं देना चाहिए, जिन कारणों की वजह से थनैला रोग होने की संभावनाएं बढ़ जाती हैं, उनका खास ध्यान रखना चाहिए, जैसे कि पशु के थनों या लेवटी पर घाव होना या चोट लगना, ज्यादा दूध देने वाले पशु, पशु की गादी या थनों का ज्यादा नीचे लटके हुए होना, ब्याने के तुरंत पश्चात् पशु के अन्य रोग (दुग्ध ज्वर, जेर ना गिराना एवं बच्चेदानी का संक्रमण इत्यादि) होना। इन सब बातों के अतिरिक्त थनैला रोग के लक्षण दिखाई देने पर तुरंत नजदीकी पशु–चिकित्सक से पशु का उपचार करवाना चाहिए।

(3) ब्याने के बाद पशु का दूध ना देनाः कई बार ऐसा भी देखने में आया है कि ब्याने के तुरंत बाद पशु ना तो पावसता

है और ना ही बिल्कुल भी दूध देता है। जबकि पशु देखने में पूरी तरह स्वस्थ लगता है, जैसे कि पशु द्वारा चारा–पानी खाना, गोबर–पेशाब करना, चलना–फिरना, उठना–बैठना, शरीर का तापमान, इत्यादि। बहुत बार ऐसी परिस्थिति में पशु की लेवटी। गादी को देखकर लगता ही नहीं की यह ताजा ब्याया हुआ है। ना ही गादी/लेवटी में कोई सूजन आदि देखने को मिलती है। इस तरह की समस्या के लिए पशु में थैनेला रोग एवं कैल्सियम की कमी के अलावा अन्य कारण भी जिम्मेदार हो सकते हैं, जैसे कि हारमोनस की समस्या, मानसिक समस्या इत्यादि। यह समस्या कई बार उन पशुओं में भी देखने को मिलती है जिनमें खीस (किली) पूरी या बिल्कुल भी नहीं निकाली गई हो। ऐसी स्थिति में पशुपालकों को देर न करते हुए तुरंत अपने नजदीकी पशु–चिकित्सक से सम्पर्क करके पशु का उचित ईलाज करवाना चाहिए।

(4) कीटोनमियताः इस रोग का कारण पशु के शरीर में दोषपूर्ण ग्लुकोज का चयापचय है, जिसकी वजह से पशु के रक्त में कीटोन प्रकृति के तत्वों की अधिकता हो जाती है एवं मूत्र, दूध एवं सांस में कीटोन तत्वों का उत्सर्जन बढ़ जाता है। यह रोग पशुओं में उनके अधिक दूध उत्पादन की अवस्था में अधिक पाया जाता है। भेड़ एवं बकरियों में यह रोग गर्भावस्था में पाया जाता है, इसलिए इन पशुओं में इसे गर्भावस्था विषाक्ता के नाम से जाना जाता है। भली–भांति पोषित पशुओं में अधिक प्रोटीन आहार, प्रारम्भिक दुग्धावस्था में अल्प ऊर्जा पूरित आहार, अपर्याप्त श्रम एवं आहार में कोबाल्ट की अल्पता का संबंध भी इस रोग से है। यह रोग क्षयकारी एवं मानसिक बीमारी के रूप में पाया जाता है। प्रभावित पशुओं में धीरे–धीरे भूख की कमी (पशु दाना/चाट खाना कम या बंद कर देता है, परन्तु सुखा चारा खाता रहता है) एवं दूध उत्पादन की कमी के रूप में प्रकट होता है। पशु का शारीरिक वजन तथा चमड़ी के नीचे की वसा कम हो जाती है, एवं पशु धीरे–धीरे कमजोर होने लगता है। पशु के दूध, मूत्र एवं सांस से कीटोनिक (मीठी) गन्ध आने लगती है। मानसिक रोग की स्थिति में पशु में जबड़ों की भ्रामक गतिशील अत्याधिक लार, अति संवेदनशीलता, अन्धापन, लड़खड़ाहट, असामान्य चाल तथा घोड़े की तरह लात मारना देखा गया है। पशु की माँसपेशियों में हलचल तथा अकड़न भी देखने को मिल सकता है। भेड़ एवं बकरीयों में यह रोग गर्भावस्था के दौरान मानसिक रोग के रूप में प्रकट होता है तथा प्रभावित पशुओं में चलने की विवशता देखी जाती है। प्रभावित पशु अपने सिर को किसी अजीवित वस्तु के विरुद्ध टकराते हैं। इस रोग की चिकित्सा के लिए 20 से 25 या 50 प्रतिशत ग्लुकोज पशु की रक्तवाहिनी में लगाया जाता है। इस रोग के उपचार के लिए प्रोपाईलिन ग्लाईकोल, ग्लिसरिन, सोडियम प्रोपियोनेट, ऐड्रिनोकोर्टिक्वाइड, ग्लुकोकोर्टिक्वाइड या इंसुलिन का प्रयोग भी लाभकारी सिद्ध होता है। पशु आहार में कोबाल्ट, फास्फोरस एवं आयोडीन की उचित मात्रा, संतुलित पशु आहार एवं व्यायाम से इस रोग को हाने से रोका जा सकता है।

(5) फास्फोरस अल्पताः यह रोग फास्फोरस तत्व की कमी से होने वाला रोग है, जो प्रभावित पशुओं लाल रक्त कोशिकाओं के नष्ट होने तथा रक्ताल्पता (अनीमीया) के रूप में परिलक्षित होता है। यह रोग 3 से 6 ब्यांत की अवधि के दौरान अथवा अत्यधिक दूध देने वाले पशुओं में ज्यादा पाया जाता है तथा ब्याने के 2 से 4 सप्ताह के बाद यह रोग अधिक देखा गया है। गाय की बजाय भैंस में यह रोग अधिक पाया जाता है। भूख की कमी, कमजोरी, दूध उत्पादन में कमी, पशु के शरीर में रक्त की कमी एवं श्लेष्मिक झिल्लियों का पीलापन, पशु के शरीर में जल की कमी के कारण गोबर का सूखा एवं कठोर होना, पशु के पेशाब का गहरा भूरा (कॉफी के जैसा) या लाल होना, पीलिया तथा हृदय की गति बढ़ जाना इस रोग में पाये जाने वाले मुख्य लक्षण है। प्रभावित पशु के शरीर में रक्त की कमी (अनमीया) तथा भूख की कमी के लिए प्रभावित पशु को फास्फोरस उपलब्ध कराने के लिए सोडियम ऐसिड फास्फेट रक्त मार्ग (नस में) तथा त्वचा के नीचे दिया जा सकता है। पशु चारे के साथ हड्डियों का चूरा या डाइकैल्शियम फास्फेट भी लाभकारी होता है। रक्त बढ़ाने के लिए कॉपर, लोहा तथा कोबाल्ट सम्मिश्रित टॉनिक लाभकारी होत हैं। रोग की रोकथाम के लिए ऐसे क्षेत्र जहाँ की मिट्टी में फास्फोरस की कमी हो में पशुओं को पूरक आहार के रूप में खनिज मिश्रण संतुलित आहार के साथ

नियमित रूप से देना चाहिए।

(6) बच्चेदानी संबंधित समस्याएंः पशुओं में ब्यांत के दौरान कई प्रकार की बच्चेदानी संबंधित समस्या रोग भी हो सकती हैं, जैसे कि बच्चेदानी का घूम जाना, ब्याने के दौरान समस्या होना, गर्भापात हो जाना, पशु का समय से पूर्व ब्याना, मरा हुआ बच्चा पैदा होना, बच्चेदानी का पशु के शरीर से बाहर आ जाना (पीछा दिखाना), पशु द्वारा जेर ना डालना, बच्चेदानी में मवाद पड़ जाना, इत्यादि। इस प्रकार

की कोई भी समस्या होने पर पशुपालकों को चाहिए कि वो देर न करते हुए तुरंत अपने नजदीकी पशु–चिकित्सक से सम्पर्क करके स्थिति से आवगत कराते हुए पशु का उचित एवं पूरा ईलाज करवाएं। अगर उपरोक्त समस्याओं में पशु को समय पर उचित ईलाज नहीं मिलता है, तो पशुपालकों को भारी आर्थिक नुकसान उठाना पड़ता है तथा पशु की मृत्यु भी हो सकती है।

जैसा कि उपरोक्त बताई गई पशुओं में संक्रमण काल की विभिन्न समस्याओं में बताया गया है कि यह सभी काफी गंभीर किस्म के रोग हैं। अतः पशुपालकों को सलाह दी जाती है कि वो इनके बारे मे सचेत एवं सजग रहे तथा ऐसे कोई भी लक्षण दिखाई देने पर तुरंत अपने पशु–चिकित्सक को दिखाएं तथा उपचार करवाएं। इसके अतिरिक्त अगर पशुपालक अपने पशु की देखभाल वैज्ञानिक तरीके से करते हुए पशु को संतुलित आहार, खनिज मिश्रण एवं उचित व्यायाम तथा समय–समय पर पशु–चिकित्सक की सलाज लेते रहें तो इन सभी समस्याओं/रोगों से काफी हद तक बचा जा सकता है।

विस्तार शिक्षा निदेशालय

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

प्रमुख गतिविधियाँ

1. पशुपालक प्रशिक्षण कार्यक्रम
2. पशुपालक कॉल सेन्टर (930-000-0857)
3. निःशुल्क SMS सेवा
4. पशु पालन सम्बंधी पाठ्य सामग्री
   (पशुधन ज्ञान, डेयरी फ़ार्मिंग मार्गदर्शिका, कैसे करें पशुपालन, मुर्गीपालन मार्गदर्शिका इत्यादि)

प्रकृति का भोजनः बकरी दूध

वंदना चौधरी[1] एवं सुमन बिश्नोई[2]

[1]डेयरी विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी महाविद्यालय, [2]पशुधन उत्पाद प्रौद्योगिकी विभाग
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा और पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

बकरी के दूध की संरचना

बकरी के दूध की संरचना लगभग गाय के दूध के समान है। बकरी के दूध में 4.1ः लैक्टोज, 3.5ः प्रोटीन, 3.8ः वसा और 0.8ः राख (तालिका 1) है। तालिका से स्पष्ट होने के कारण यह भी अनुमान लगाया जाता है कि बकरी के दूध में गाय के दूध की तुलना में कम लैक्टोज और अधिक प्रोटीन, राख और वसा होता है।

तालिका 1. बकरी, गाय और मानव दूध की संरचना (प्रति 100 ग्राम)

संरचना	बकरी	गाय	मानव
वसा (ग्राम)	3.8	3.6	4.0
प्रोटीन (ग्राम)	3.5	3.3	1.2
लैक्टोज (ग्राम)	4.1	4.6	6.9
एष (ग्राम)	0.8	0.7	0.2
कुल ठोस (ग्राम)	12.2	12.3	12.3
कैलोरी (बंस)	70	69	68
कैल्षियम (मिलीग्राम)	134	122	33
फॉस्फोरस (मिलीग्राम)	141	119	43
मैग्नीषियम (मिलीग्राम)	16	12	4
पोटैषियम (मिलीग्राम)	181	152	55
सोडियम (मिलीग्राम)	41	58	15
क्लोरीन (मिलीग्राम)	150	100	60
विटामिन डी (आई.यू.)	2.3	2.0	1.4

बकरी के दूध का उपभोग करने के स्वास्थ्य लाभ

दुनिया की अधिकांश आबादी बकरी का दूध पीती है–

- वसा ग्लोब्यूल का छोटा आकार पाचन समस्याओं वाले रोगियों के लिए आसानी से पचाने योग्य बनाता है।
- छोटे वसा अणुओं के कारण बकरी के दूध में कम क्रीम अलगाव होता है।
- बकरी के दूध में दूध वसा में विटामिन ए के अग्रदूत होते हैं जो इसे शरीर द्वारा उपयोग के लिए आसानी से उपलब्ध कराने की अनुमति देता है।
- यह पोषण प्रोफाइल लगभग मानव दूध के समान है और इसलिए इसे छोटे या कमजोर बच्चों को दिया जा सकता है।
- बकरी का दूध श्लेष्म (श्लेष्म) के गठन का कारण नहीं बनता है और इसलिए अस्थमा और विभिन्न एलर्जी वाले व्यक्तियों के लिए उपयुक्त है।
- अन्य पशुधन की तुलना में बकरी के दूध की सिलिकॉन, फ्लोरीन और क्लोरीन सामग्री अधिक है। फ्लोरीन और क्लोरीन प्राकृतिक कीटाणुनाशक हैं। फ्लोरीन मधुमेह को बदलने में भी मदद करता है।
- गाय के दूध (10% दही युक्त) की तुलना में बकरी के दूध में 2% दही होती है, जो पेट में निकलती है।
- बकरी के दूध को भी क्षतिग्रस्त यकृत वाले व्यक्ति द्वारा उपभोग किया जा सकता है क्योंकि इसमें छोटे आकार के वसा ग्लोब्यूल होते हैं।
- बकरी का दूध एक अच्छा चयापचय एजेंट है। यह तांबा और लौह चयापचय भी कर सकते हैं। यह सूजन और कब्ज से राहत में मदद करता है।
- बकरी के दूध में ज्यादातर 'ए 2 केसिन' होता है जो प्रोटीन के मामले में मानव स्तन दूध से तुलनीय बनाता है। ए 2 केसिन किसी भी सूजन संबंधी बीमारियों का कारण नहीं बनता है, जैसे कोलाइटिस, चिड़चिड़ा आंत्र सिंड्रोम इत्यादि।
- बकरी के दूध में मध्यम–चेन फैटी एसिड भी होते हैं (गाय के दूध में 15–20 प्रतिशत की तुलना में 30–35 प्रतिशत)। ये एसिड ऊर्जा को बढ़ावा देते हैं और शरीर में वसा के रूप में संग्रहित नहीं होते हैं। ये कोलेस्ट्रॉल

को कम करने और आंतों के विकारों और हृदय की बीमारियों जैसे कठिन परिस्थितियों का इलाज करने में मदद करते हैं।

- बकरी का दूध खराब कोलेस्ट्रॉल को कम करता है और मानव शरीर में अच्छे कोलेस्ट्रॉल का स्तर बढ़ाता है। इसमें उपचार गुण हैं और जैतून का तेल की तरह, उच्च कोलेस्ट्रॉल को जांच में रखने में प्रभावी हैं।
- इसमें गाय के दूध की तुलना में अधिक खनिज होते हैं यानी दैनिक अनुशंसित मूल्य का 33 प्रतिषत (गाय के दूध में 28 प्रतिशत है)।
- बकरी के दूध के मॉइस्चराइजिंग गुण त्वचा को नरम रखते हैं। बकरी के दूध में विटामिन 'ए' के उच्च स्तर होते हैं जो मुँहासे से लड़ने, रंग सुधारने में मदद कर सकते हैं और इस प्रकार आपकी त्वचा के समग्र स्वास्थ्य में सुधार कर सकते हैं। बकरी के दूध में लैक्टिक एसिड मृत त्वचा कोशिकाओं को हटाकर आपकी त्वचा की रंगत को उज्ज्वल कर सकता है; तो कोई और सुस्त और चिपचिपा चेहरा नहीं! चूंकि बकरी के दूध में मनुष्यों के समान पीएच स्तर होता है, यह त्वचा द्वारा आसानी से अवशोषित होता है और बैक्टीरिया को हटाने में मदद करता है जो आपकी त्वचा को स्वस्थ रखता है।
- अध्ययनों से पता चला है कि बकरी के दूध में मौजूद जैसे कैल्शियम, लौह, मैग्नीशियम और फॉस्फोरस अधिक में पोषक तत्व आसानी से पचते है और गाय के दूध की तुलना में शरीर द्वारा अधिक उपयोग किए जाते है। इन खनिजों की जैव उपलब्धता के कारण, बकरी का दूध पोषक तत्वों की कमी के इलाज में इजाफा करता है।
- यह लोहे और मैग्नीशियम की कमी को भी ठीक कर सकता है। बकरी के दूध की नियमित खपत में लोहे का उपयोग करने की क्षमता को बढ़ाने में मदद मिलती है।
- यह हीमोग्लोबिन के पुनर्जनन को बढ़ावा देने में भी मदद करता है, जिससे ऑस्टियोपोरोसिस और एनीमिया का मुकाबला करने के लिए इसे एक सुरक्षित और प्राकृतिक तरीका बना दिया जाता है।
- जस्ता और सेलेनियम के उच्च स्तर भी न्यूरोडिजेनरेटिव बीमारियों को रोकने में मदद करते हैं।

विस्तार शिक्षा निदेशालय

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

पशुपालन सम्बंधी जानकारियाँ पाएँ

नि:शुल्क SMS (मैसेज) द्वारा

पंजीकरण हेतु- 930-000-0857 (पशुपालक कॉल सेन्टर)

(सुबह 10 से 1 बजे तक) पर कॉल करें।

पशुओं में लंगड़िया रोग (ब्लैक क्वार्टर)

राजेन्द्र यादव[1], संदीप[2] एवं पंकज कुमार[3]

[1]क्षेत्रीय पशु चिकित्सा, रोग निदान एवं विस्तार केन्द्र, महेन्द्रगढ़

[2]पशु चिकित्सक, पशुपालन विभाग, हरियाणा

[3]पशु रोग जाँच प्रयोगशाला, रोहतक (लुवास, हिसार)

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सक एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

1) यह रोग क्या है?

पशुओं में लंगड़िया रोग (ब्लैक क्वार्टर) एक घातक संक्रामक रोग है, जो कि पशुओं में अतिविषाक्ता एवं माँसपेशियों की सूजन आदि लक्षणों के रूप में प्रकट होता है। भारत देश में कई जगह इस रोग को स्थानीय भाषाओं में लँगड़ा बुखार, टाँगिया रोग एवं फरया इत्यादि नामों से भी जाना जाता है। यह रोग मुख्य रूप से दुनियां में उष्ण कटिबंधीय जलवायु वाले देशों में ज्यादा देखने को मिलता है। बरसात एवं बरसात के तुरंत बाद के मौसम में यह रोग अधिक देखने को मिलता है। भारत में यह रोग दक्षिणी राज्यों (तमिलनाडु, महाराष्ट्र, कर्नाटक, आन्ध्रप्रदेश एवं तेलंगाना) में ज्यादा पाया जाता है। कई बार तो इन क्षेत्रों में यह रोग महामारी के रूप में देखने को भी मिल सकता है। गाय, भैंस, भेड़ एवं बकरियों में यह रोग अधिक प्रचलित है, तथा 6 माह से 2 वर्ष की आयु के अच्छी शारीरिक अवस्था के पशुओं यानि स्वस्थ पशुओं में यह रोग अधिक देखने को मिलता है। इस रोग को अगर समय पर उचित उपचार नहीं किया जाता है तो इसमें मृत्यु दर बहुत अधिक होती है। बहुत ही कम संभावना के साथ यह रोग सुअर प्रजाति के पशुओं में भी कभी–कभी देखने को मिल सकता है।

2) यह रोग होता कैसे है?

पशुओं में लंगड़िया रोग क्लोस्ट्रिडियम चौवियाई नामक जीवाणु के संक्रमण की वजह से होता है। यह एक मृदा जन्म रोग है, जो इस रोग के जीवाणु द्वारा प्रदूषित चारा–पानी खाने तथा बाल/ऊन एवं पूँछ काटने के समय हुए घावों के संक्रमण से हो सकता है। यह एक छुआछूत का रोग नहीं है। इस रोग का जीवाणु विपरीत परिस्थितियों में स्पोर के रूप में प्रकट हो जाता है, तथा इस रूप में मिट्टी एवं वातावरण में सालों तक बिना नष्ट हुए रह सकता है जो कि पशुओं में संक्रमण का कारण बनता है। इस रोग से प्रभावित होकर मरे हुए पशु को अगर उचित तरीके से जलाया या दबाया नहीं जाता है तो वो भी मिट्टी एवं वातारण में इस रोग के जीवाणुओं को फैलाने का काम करता है, जो कि अन्य स्वस्थ पशुओं के लिए खतरा हो सकता है। पशुओं में आपस में लड़ाई के दौरान सींगों से हुए घाव, किसी नुकिली वस्तु से हुए घाव/चोट तथा बधियाकरण, बाल/ऊन काटने, ब्याने, जेर निकालने एवं पूंछ काटने के दौरान होने वाले घावों पर मिट्टी लगने से भी इस रोग के होने की संभावनाएं ज्यादा होती है। कई बार पशुओं में इंजैक्शन या टीका लगाने के दौरान पुरानी या मिट्टी लगी हुई सुई का इस्तेमाल करने से भी इस रोग के होने की संभावना रहती है। इस रोग के होने के लिए पशु को मांसपेशियों में घावों का गहरा होना बहुत जरूरी है, हल्के तथा ऊपरी सतह के घावों से इस रोग के जीवाणुओं का संक्रमण होने की संभावना कम होती है। अतः यह रोग 6 माह से 2 वर्ष की आयु के पशुओं में जिनकी शारीरिक अवस्था अच्छी होती है तथा जिनको मांसपेशियां अच्छी तरह विसरित होती है, उनमें होने वाले गहरे घाव/चोट की वजह से ज्यादा देखने को मिलता है।

3) इस रोग के लक्षण क्या–क्या हैं?

इस रोग के जीवाणुओं के शरीर में प्रवेश करने, बाद में

2 से 5 दिन में पशु में रोग के लक्षण दिखाई देने शुरू हो जाते हैं। प्रभावित पशुओं में भूख की कमी मानसिक अवसाद एवं सुस्ती देखने को मिलती है। पशु के शरीर का तापमान अत्यधिक बढ़ा हुआ (106°–108°F) पाया जाता है। पशु के हृदय गति एवं श्वसन दर बढ़ जाती है। प्रभावित पशुओं के कन्धों, गर्दन, पुट्ठों के अतिरिक्त वक्ष, जंघाओं एवं पिछले हिस्सों को मांसपेशियों में सूजन देखने को मिलती है तथा इन स्थानों पर पशु भी हाथ से छूने पर गर्म और दबाने पर दर्द देखने को मिलता है। पशु के शरीर की प्रभावित मांसपेशियों में गैंस भरने की वजह से इन हिस्सों को दबाने पर चरचराहट की आवाज सुनाई देती है। पशु के शरीर के प्रभावित हिस्सों का रंग गहरे काले रंग का दिखाई देता है तथा इन जगहों पर सुई से छेद करने या चीरा लगाने पर गैंस निकलती है। पशुओं के पैरों की मांसपेशियों के प्रभावित होने पर पशु लंगड़ा होकर चलता है, कई बार पशुओं के पूरे शरीर में त्वचा के नीचे गैंस भर जाती है एवं कहीं पर भी दबाने से चरचराहट की आवाज आती है। कुछ समय पश्चात प्रभावित मांसपेशियों की कोशिकाओं के मृत होने की वजह से तापमान सामान्य से भी कम हो जाता है एवं दर्द होना भी बन्द हो जाता है, तथा पशु की 12 से 48 घण्टों के उपरान्त मृत्यु भी हो सकती है। इन सबके अतिरिक्त इस रोग से अति प्रभावित पशु की 24 घंटे के भीतर बिना कोई लक्षण दिखाई भी मृत्यु हो सकती है।

4) इस रोग की पहचान कैसे करें?

पशुपालकों को अगर अपने पशुओं में किसी भी वजह से कोई घाव होने पर एवं खासकर बरसात एवं बरसात के तुरंत बाद के समय में उपरोक्त में से कोई भी लक्षण दिखाई दें, तो ऐसे पशुओं में लंगड़िया रोग की संभावना मानकर तुरंत पशु चिकित्सक से जांच करवाकर इस रोग का पता लगाना चाहिए। इसके अतिरिक्त पशु की प्रभावित मांसपेशियों पर सुई मारने या चीरा लगाने पर गैंस के साथ निकलने वाले पानी जैसे पदार्थ को पशु रोग जाँच प्रयोगशाला में जाँच करवाकर भी इस रोग के जीवाणुओं का पता लगाया जा सकता हैं। चूंकि यह एक पशुओं का अति घातक रोग है, जिसमें मृत्युदर काफी अधिक होती है, अतः पशुपालकों को सलाह दी जाती है कि पशुओं में इस रोग के कोई भी लक्षण दिखाई देने पर देर ना करते हुए तुरंत अपने पशु चिकित्सक से उपचार करवाएं।

5) इस रोग का उपचार क्या है?

पशुपालक इस रोग से प्रभावित अपने पशु का जितना जल्दी हो सके पशु चिकित्सक से ईलाज शुरू करवा दे एवं पुरा ईलाज करवाएं। पैनीसीलीन नामक एंटीबायोटीक का प्रयोग इस रोग में अत्यंत लाभकारी सिद्ध होता है। इस एंटीबायोटीक को पशु की प्रभावित मांसपेशियों में सीधा लगाने पर भी फायदा मिलता है। पशु चिकित्सक द्वारा दी जाने वाली एंटीबायोटीक एवं अन्य दवाइयों के अतिरिक्त इस रोग में सहायक चिकित्सा के रूप में लीवर टॉनिक, विटामीन–बी, आदि से पूरित संतुलित आहार का प्रयोग शीघ्र स्वास्थ लाभ के लिए उपयोगी है। उपचार के अलावा प्रभावित पशु को अन्य पशुओं से अलग कर देना चाहिए।

6) इस रोग की रोकथाम कैसे करें?

पशुपालक अपने पशुओं को इस रोग से बचाने के लिए निम्नलिखित उपाय कर सकते हैं–

- लंगड़िया बुखार से मृत पशु का शरीर इस रोग के जीवाणुओं को मिट्टी एवं वातावरण में फैलाने के लिए जिम्मेदार होता है। अतः इस रोग से मृत पशु के शरीर को पशु चिकित्सक की सलाह लेकर उचित तरीके से जला या दबा देना चाहिए।
- ऐसे क्षेत्र जहाँ इस रोग के जीवाणु होने की संभावना ज्यादा होती है, वहां पर पशुओं (खासकर 6 माह से 2 वर्ष की आयु) को नहीं जाने देना चाहिए।
- इस रोग से मृत पशु को जलाने या दबाने से पहले उसकी खाल को बिल्कुल नहीं उतारना चाहिए। यानि मृत शरीर को खाल के साथ ही जला या दबा देना चाहिए।
- पशुपालकों को अपने पशुओं को किसी भी तरह की चोट लगने से बचाना चाहिए। अगर चोट लग भी जाए या घाव हो जाए तो उसके मिट्टी नहीं लगने देनी चाहिए एवं पशु चिकित्सक से ऐसे घाव का ईलाज करवाना चाहिए।
- पशुओं को कोई भी दवाई देने या टीकाकरण के लिए तथा अलग–अलग पशुओं के लिए अलग नई सूई का प्रयोग करना चाहिए।
- पशुपालकों द्वारा पशु बाड़े की स्वच्छता तथा स्वच्छ एवं शुद्ध आहार का विशेष ध्यान रखना चाहिए।
- चूना (10 प्रतिशत), फिनाईल (5 प्रतिशत) या फॉर्मलिन (2–4 प्रतिशत) से बाढ़े का कीटानशन कर सकते हैं।

पशुओं में इस रोग की रोकथाम के लिए टीका भी उपलब्ध है। पशुपालक अपने 4–6 माह की आयु के पशुओं का पशु–चिकित्सक की सलाह लेकर अप्रैल–जून (खासकर बरसात से पहले) की अवधि में प्रतिवर्ष टीकाकरण करवा सकते हैं।

व्यावसायिक डेयरी फार्मिंग
प्रशिक्षण
विस्तार शिक्षा निदेशालय

विस्तार शिक्षा निदेशालय

ग्राम सचिवालय सुलतानपुर
खण्ड नीलोखेड़ी जिला (करनाल)
अटल सेवा केन्द्र
ATAL SEVA KENDRA
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार
पशु उत्पादन बढ़ाने हेतु अनुसूचित जाति/जनजाति के
पशुपालकों का ज्ञान एवं कौशल संवर्धन
राष्ट्रीय कृषि विकास योजना
के अंतर्गत
विस्तार शिक्षा निदेशालय

डेयरी प्रशिक्षण • पशुपालन विभाग के उपनिदेशक और प्रगतिशील महिला पशुपालक ने साझा किए आय बढ़ाने के अनुभव

पशुपालकों को वैज्ञानिक तरीके से पशुओं के रखरखाव के दिए टिप्स

भास्कर न्यूज़ | महेंद्रगढ़

नारनौल. डेयरी फार्मिंग प्रशिक्षण में उपस्थित प्रतिभागी।

पशुपालन अपनाकर किसान कर सकता है आय दोगुनी : डा. गोसाई

कार्यक्रम में महिलाओं को संबोधित करते डा. सुजॉय व डा. दिलीप गोस्वामी।

मादा कुत्ते से निकला 1.2 किग्रा. का ट्यूमर

भास्कर न्यूज़ | महेंद्रगढ़

क्षेत्रीय पशु रोग निदान एवं विस्तार केंद्र रिवासा, महेंद्रगढ़ में डॉ. अमित सांगवान पशु चिकित्सा सर्जन द्वारा पालतू मादा कुत्ते के स्तन से 1 किलो से अधिक का ट्यूमर निकाला। वर्णित पशु में यह ट्यूमर पिछले 2 महीने से आकार में निरंतर बढ़ रहा था।

डॉ. अमित सांगवान ने बताया कि यदि यह ट्यूमर समय से नहीं निकला जाता तो ये रक्त द्वारा शरीर के महत्वपूर्ण अंगों जैसे फेफड़ों में फैलकर जानलेवा रूप धारण कर सकता था। शरीर से निकालने के बाद इस ट्यूमर का वजन 1.2 किलोग्राम पाया गया। उन्होंने बताया कि इस प्रकार के स्तन ट्यूमर आमतौर पर बड़ी उम्र की मादा श्वान में पाया जाता है। ऑपरेशन टीम में डॉ. अमित सांगवान, डॉ. देवेन्द्र सिंह, डॉ. ज्योति शुन्थवाल और वीएलडी हरपाल थे।

मादा कुत्ते का ऑपरेशन करते डॉक्टर।

पशु धन संवर्धन सेमिनार • पशुपालकों को दी घरेलू उपचार की जानकारी

आमदनी दोगुना करने के लिए वैज्ञानिक तरीके से करें पशुपालन

रिवासा में लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विवि हिसार के रीजनल सेंटर में डेयरी के फायदे बताए

भास्कर न्यूज़ | महेंद्रगढ़

महिलाओं को दिया गया पशुपालन का प्रशिक्षण

भास्कर न्यूज़ | महेंद्रगढ़

प्रगतिशील पशुपालक नीतू देवी को किया सम्मानित

डेरी फार्मिंग पर कौशल संवर्धन प्रशिक्षण में विशेषज्ञों ने पशुपालन कर आमदनी दोगुना करने पर दिया जोर

अमर उजाला ब्यूरो

डेयरी प्रशिक्षण शिविर में उपस्थित प्रतिभागी। - अमर उजाला

अब करनाल में ही व्यावसायिक डेयरी प्रशिक्षण कराएगा लुवास : खन्ना

नीलोखेड़ी, 12 नवंबर (सोही) : लाला लाजपत राय पशु-चिकित्सा एवं पशु-विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार ने करनाल और आसपास के जिलों की जरूरतों को ध्यान में रखते हुए उचानी, करनाल में स्थित क्षेत्रीय पशु रोग निदान एवं विस्तार केंद्र में व्यावसायिक डेयरी प्रशिक्षण शुरू करने का महत्वपूर्ण कदम उठाया है।

लुवास किसानों की आमदनी बढ़ाने और युवाओं को स्वावलम्बी बनाने के लिए निरन्तर प[...] सम्बंधित कई तरह के प्र[...] आयोजित करता रहा है। इसी [...] में अब व्यावसायिक डेयरी प्र[...] करनाल जिले में भी आयोजि[...] जा रहा है। प्रशिक्षण का स[...] कर रहे विस्तार शिक्षा निदेशा[...] डा. सुजॉय खन्ना ने बता[...] व्यावसायिक डेयरी प्रशिक्ष[...] फीस मात्र 5 सौ रुपए होगी, [...] का भुगतान 14-नवंबर-[...] (बुधवार) को क्षेत्रीय पशु रोग निदान एवं विस्तार केंद्र, उचानी के फीस काउंटर पर किया जा सकता है। इस सात दिवसीय प्रशिक्षण कार्यक्रम में विषय विशेषज्ञ (वैज्ञानिक) प्रतिभागियों को डेरी पशुओं की नस्लें, उनका प्रबंधन, पशु रोगों का निदान (विशेषकर थनैला), आवास प्रबंधन, खनिज मिश्रण की उपयोगिता, परजीवी प्रबंधन (नियंत्रण और उपचार), चारा [...]

पशुपालन की ट्रेनिंग लेकर बनें आत्मनिर्भर : समर सिंह

घरौंडा. राष्ट्रीय कृषि विकास योजना के अंतर्गत बड़ौली गांव में मुख्य अतिथि समर सिंह कल्याण ट्रेनिंग में शामिल महिला को सम्मानित करते हुए

50 महिलाओं को दी पशुओं के बारे में जानकारी

क्षेत्रीय पशु रोग निदान एवं विस्तार केंद्र में सम्मानित महिलाओं के साथ केंद्र स्टाफ।

अमर उजाला ब्यूरो

डेरी प्रशक्षिण में युवाओं ने दिखाई रुचि

हरिभूमि न्यूज़ | महेंद्रगढ़

महेंद्रगढ़। शिविर में डॉ. देवेंद्र, डॉ. ज्योति व डॉ. अमित सांगवान पशुपालकों को जानकारी देते हुए। फोटो : हरिभूमि

लुवास विश्वविद्यालय स्वरोजगार के लिए व्यवसायिक डेयरी का देगा प्रशिक्षण

महेंद्रगढ़ | रिवासा के क्षेत्रीय पशु रोग निदान एवं विस्तार केंद्र (लुवास) हिसार द्वारा युवा महिलाओं एवं पुरुषों के लिए डेयरी प्रशिक्षण का आयोजन 24 से 30 नवम्बर तक होगा। आयोजन डॉ. देवेन्द्र व डॉ. ज्योति द्वारा किया [...]

दुधारू पशुओं की नस्ल सुधार व पशु पालन में महिलाओं का अहम योगदान

भास्कर न्यूज़ | करनाल

पशुधन संवर्धन पर सेमिनार आज आयोजित होगा

पशुपालक महिलाओं का किया मार्गदर्शन

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय हिसार द्वारा आयोजित ट्रेनिंग का क्षेत्रिय पशु रोग एवं निदान केंद्र में समापन

किसानों को खनिज मिश्रण और अच्छे पशुपालन की ट्रेनिंग दी

भास्कर न्यूज़ | करनाल

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय हिसार द्वारा आयोजित 7 दिवसीय ट्रेनिंग का क्षेत्रिय पशु रोग एवं निदान केंद्र करनाल में समापन हुआ। लुवास विश्वविद्यालय ने करनाल और आस-पास के जिलों की जरूरतों को ध्यान में रखते हुए करनाल में स्थित क्षेत्रीय पशु रोग निदान एवं विस्तार केंद्र में व्यावसायिक डेयरी प्रशिक्षण की शुरुआत की है। लुवास विश्वविद्यालय इस से पहले भी पूरे प्रदेश में किसानों की आमदनी बढ़ाने और युवाओं को स्वावलंबी बनाने के लिए निरंतर पशुपालन संबंधित कई तरह के प्रशिक्षण आयोजित करता रहा है। इसी कड़ी में करनाल जिले में व्यावसायिक डेयरी प्रशिक्षण का आयोजन चल रहा है। समापन समारोह में डॉ. राजिंदर श्योकंद निदेशक, डॉ. विजय अरोरा और डॉ. रणबीर सिंह बिस्ला निदेशक क्षेत्रिय पशु रोग एवं निदान केंद्र उच्चाणी ने प्रतिभागियों को पशुपालन से संबंधित ज्ञान एवं कोशल समवर्धन बढ़ाने के लिए जागरूक किया और सर्टिफिकेट वितरित किए।

करनाल. किसानों को सर्टिफिकेट वितरित करते डॉ. राजिंदर श्योकंद।

ट्रेनिंग का संचालन विस्तार शिक्षा निदेशालय के डॉक्टर सुजॉय खन्ना ने किया। इस प्रशिक्षण कार्यक्रम में क्षेत्रीय पशु रोग निदान एवं विस्तार केंद्र के सभी विषय विशेषज्ञ प्रतिभागियों को डेरी पशुओं की नस्लों, उनके प्रबंधन विशेषकर आवास प्रबंधन, सभी पशु रोगों का निदान विशेषकर थनैला, खनिज मिश्रण की उपयोगिता, परजीवी प्रबंधन, चारा प्रबंधन, टीकाकरण के लाभ, पशुओं की प्रजनन संबंधित समस्याएं एवं उपचार के बारे में जानकारी दी। भारतीय गेहूं एवं जौ अनुसंधान संस्थान के डॉ. अनिल खिप्पल और राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान के डॉ. चंदर दत्त ने भी इस डेयरी प्रशिक्षण में पशुपालकों को विभिन्न विषयों पर जानकारी दी। साथ ही पशुपालन और डेयरी विभाग के डॉ. विशाल दुग्गल ने डेयरी फार्म शुरू करने के लिए हरियाणा सरकार की विभिन्न योजनाएं के बारे में जानकारी दी। डॉ. राजिंदर सिंह श्योकंद ने बताया कि अगर पशु-पालन वैज्ञानिक तरीके से करा जाए तो किसानों की आमदनी दुगुनी करने का अच्छा उपाय साबित हो सकता है। क्षेत्रीय पशु रोग निदान एवं विस्तार केंद्र के निदेशक डॉ. रणबीर सिंह बिस्ला ने जानकारी दी कि सभी वैज्ञानिक और विशेषज्ञ प्रतिभागियों को ज्यादा से ज्यादा जानकारी दी है। अंत में डॉ. सुजॉय खन्ना ने सभी प्रशिक्षणार्थियों से अनुरोध किया कि राज्य में दूध उत्पादन में बढ़ोतरी के लिए बढ़ चढ़कर योगदान दें।